अध्ययन मण्डल

अध्यक्ष
कुलपति
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी
1.प्रो0 अरविंद के जोशी, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)
2.प्रो0 बी.मोहन कुमार, जी.बी.पंत कृषि व प्रोद्योगिकी विश्वविद्यालय, पंतनगर, उत्तराखण्ड

संयोजक
निदेशक समाज विज्ञान विद्याशाखा

पाठ्यक्रम समन्वयक

डॉ0 दीपक पालीवाल, सहायक प्राध्यापक समाजशास्त्र, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

इकाई लेखन	इकाई संख्या
Ms. Hannah Johns, Centre for the study of Social System Jawahalal Nehru University, New Delhi	**5,6,7,8,9**
Ms. Mitushi Gupta, Centre for the study of Social System Jawahalal Nehru University, New Delhi	**4**
Mr. Vijay Verma, Govt. Medical College, Haldwani	**1,2,3**
Translation of Units: Punit Chaturvedi	**4,5,6,7,8,9**

संपादन

डॉ0 दीपक पालीवाल, सहायक प्राध्यापक समाजशास्त्र, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

कापीराइट @ उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

प्रकाशन वर्ष- 2020

प्रकाशन- उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी- 263139

सर्वाधिक सुरक्षित। इस प्रकाशन का कोई भी अंश उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी MASO-608

स्वास्थ्य और चिकित्सा का समाजशास्त्र – II

Sociology of Health and Medicine -II

खण्ड 1	**Medical Institutions**	
Unit 1:	Medical Care, Hospital, Healing Centers चिकित्सा देखभाल, अस्पताल एवं उपचार केन्द्र	पृष्ठ–1–8
Unit 2:	Allied Institutions: Family, Neighbourhood चिकित्सा से संबद्ध संस्थाए	पृष्ठ–9–11
Unit3:	Pharmaceuticals औषधि	पृष्ठ–12–15
खण्ड 2	**Health Care System in India**	
Unit 4:	**Health Planning and Policy in India** भारत में स्वास्थ्य नियोजन एवं नीतियां	पृष्ठ–16–31
Unit 5:	**Health care Administartion in India** **भारत में स्वास्थ्य प्रशासन**	पृष्ठ–32–41
Unit 6:	**Primary Health Care & Private Health Care in India** भारत में प्राथमिक स्वास्थ्य एवं निजी स्वास्थ्य सेवा	पृष्ठ–42–51
Unit 7:	**Problems of Health & Medical Facilities** स्वास्थ्य एवं चिकित्सा सुविधाओं की समस्याएं	पृष्ठ–52–60
Unit 8:	**PPP(Public –Private Partnership)** सार्वजनिक–निजी साझेदारी	पृष्ठ–61–70
Unit 9:	**Medical Tourism** चिकित्सा पर्यटन	पृष्ठ–71–78

इकाई -1

चिकित्सा देखभाल, अस्पताल एवं उपचार केन्द्र (Medical Care, Hospitals and Healing Centres)

1.1: उद्देश्य

1.2: परिचय

1.3: अस्पताल संगठन

1.4: प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र का महत्व

1.5: पीएचसी में संचालित महत्वपूर्ण कार्यक्रम

1.6: अन्य केन्द्रों का ढांचा

1.7: निष्कर्ष

1.8: सन्दर्भ

1.1: उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के निम्न उद्देश्य हैं:

1. चिकित्सकीय देखभाल के सम्बन्ध में जानना।
2. चिकित्सा सुविधा प्राप्त करने हेतु आवश्यक स्थानों का चयन।
3. चिकित्सा हेतु आवश्यक एवं सही स्थिति का ज्ञान होना।
4. चिकित्सालयों में चिकित्सा सुविधा प्राप्त करने हेतु क्रमवद्ध चरणों की स्थिति समझना।
5. आवश्यक चिकित्सा सुविधा हेतु विभिन्न चिकित्सा केन्द्रों की स्थिति को समझना।
6. विभिन्न स्वास्थ्य केन्द्रों में कार्यरत कर्मचारियों की स्थिति।

1.2: परिचय (Introduction)

सर्वप्रथम भारत वर्ष के स्वरूप भौगोलिक परिस्थितियों का आंकलन एवं विवेचन के पश्चात यह तथ्य दृष्टिगत होता है कि चिक्तिसकीय सुविधा आम जनमानस तक किन–किन माध्यमों से पहुंच रही है एवं उसका वास्तविक प्रतिशत कितना है। यह पर यह जानना अति आवश्यक है कि आम जन सामान्य तक चिकित्सा सुविधा उपलब्ध करवाने हेतु सरकारें कृत संकल्प रही है। समय–समय पर विषय विशेषज्ञों द्वारा प्राप्त आंकड़ों एवं तथ्यों का आंकलन एवं विवेचन उपरान्त देश में स्वास्थ्य सेवाओं को सतही स्तर तक पहुंचाने हेतु सत्त प्रयास किये जाते रहे है। देश की भौगौलिक स्थिति एवं आम जन सामान्य की आर्थिक स्थिति को आपस में जोड़ते हुए स्वास्थ्य के क्षेत्र में विभिन्न चरणों में सेवाओं को पहुंचाने का कार्य किया गया है।

1.3: अस्पताल संगठन (Hospital Organization)

प्रत्येक अस्पताल की व्यवस्था और संगठन अलग अलग होता किसी भी अस्पताल या चिकित्सालय का प्रबन्ध सरकारी या गैर सरकारी प्रबन्ध समिति के पास होता है। इसके विभिन्न चरण निम्न प्रकार है–

- **उपकेन्द्रः** प्रत्येक ग्रामीण क्षेत्र में 5000 जनसंख्या पर उक्त केन्द्र स्थापित होता है। तत्काल सामान्य चिकित्सा सुविधा उपलब्ध करवाने हेतु केन्द्र में एक स्वास्थ्य कार्यकर्ती (ANM), एक स्वास्थ्य कार्यकर्ता को नियुक्त किया गया है। उक्त केन्द्र का कार्य आच्छादित जनसंख्या में 0 से 5 वर्ष तक के बच्चों एवं गर्भवती महिलाओं हेतु आवश्यक टीकारण करना है। साथ ही सामान्य रोगों हेतु आवश्यक औषधी वितरण भी स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं द्वारा किया जाता है।
- **प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रः** प्रत्येक 20 से 30 हजार की जनसंख्या पर प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र बनाया गया है। आदीवासी क्षेत्रों की भौगौलिक स्थिति को देखते हुए वहां पर जनसंख्या 20 हजार का मापदंड रखा गया है। उक्त केन्द्रों में चिकित्साधिकारी के साथ–साथ दवाई वितरण एवं अन्य कार्य हेतु आवश्यक स्टाफ नियुक्ति किया गया है। उप केन्द्रो की तुलना में इसका स्वरूप बड़ा माना गया है साथ ही मिलने वाली चिकित्सा सुविधाओं का स्तर उपर का होता है। प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र में रोगी की चिकित्सकीय देखभाल हेतु चिकित्साल में भर्ती सुविधा उपलब्ध रहती है।
- **सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रः** उक्त केन्द्र लगभग 80 हजार जनसंख्या पर कार्य रकता है। प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र के पश्चात विशेषज्ञ चिकित्सकों द्वारा स्वास्थ्य सुविधाएं प्रदान करने हेतु उक्त केन्द्र प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र से अगले चरण का स्वास्थ्य सुविधा प्रदान करने वाला केन्द्र माना गया है। इसमें चिकित्सा अधीक्षक के साथ –साथ अन्य रोगों हेतु आवश्यक चिकित्सा विशेषज्ञ उपलब्ध रहते है। सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रो से रेफर किये गये रोगियों को आवश्यक चिकित्सा सुविधा उपलब्ध करवाता है सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र में स्त्री रोग विशेषज्ञ, सर्जन, बाल रोग विशेषज्ञ, अस्ति रोग विशेषज्ञ, दंत रोग विशेषज्ञ, निश्चेतक उपलब्ध रहते है। सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र वृह्द समुदाय को चिकित्सा सुविधा प्रदान करता है। सामुदायिक स्तर पर स्वास्थ्य सेवाओं को उच्च स्तरीय आकार प्रदान करने एवं निर्धन व्यक्ति, समुदाय तक स्वास्थ्य सेवाएं पहुंचाने हेतु परिवार कल्याण मंत्रालय द्वारा श्री एच0वी0कृष्णन अतिरिक्त मुख्य सचिव पश्चिम बंगाल की अध्यक्षता में सन् 1982 में कृष्णन कमेटी का गठन किया गया जिसका मुख्य कार्य उम्दा स्तर पर मुख्यतः निर्धन व्यक्तियों तक स्वास्थ्य सुविधा पहुंचाने हेतु आवश्यक दिशानिर्देश प्रदान कर कार्य करवाना था।
- **जिला चिकित्सालयः** सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र के पश्चात उच्च स्तरीय चिकित्सा सुविधा जन समुदाय प्रदान करने हेतु जिला चिकित्सालय की स्थापना की गई है। जिला चिकित्सालय जो कि प्रमुख चिकित्सा अधिक्षक के नियंत्रणाधीन रहता है में विभिन्न रोगों के आवश्यक निदान हेतु चिकित्सा विशेषज्ञ उपलब्ध रहते है। जिला चिकित्सालय उप केन्द्र, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र से रैफरल रोगियों एवं अन्य गम्भीर रोगों की चिकित्सा हेतु जिले में सवोच्च इकाई मानी जाती है। जिला चिकित्सालय में जहां रोगियों की आवश्यक शारीरिक जॉचें सम्भव है वहीं चिकित्सा विशेषज्ञों द्वारा विभिन्न गम्भीर रोगों का निदान किया जाता है। जिला चिकित्सालय चूंकि जिले का सबसे उच्च स्वास्थ्य माना गया है कारणवश यहा पर रोगियों की

संख्या का भार निचले स्तर के चिकित्सालयों की अपेक्षा कई गुंना ज्यादा रहता है। मुख्यतः जिला चिकित्सालय में स्वास्थ्य सेवाऐं उच्च स्तर की प्रदान करने हेतु जिला चिकित्सालय तत्पर रहता है।

1.4: प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र का महत्व (Importance of Primary Health Centres)

सरकारों द्वारा चलाये जा रहे स्वास्थ्य से सम्बन्धित विभिन्न कार्यो, योजनाओं, सुविधाओं आदि को ग्रामीण क्षेत्रों के आम जन सामान्य तक पहुंचाने का कार्य प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों और अस्पतालों द्वारा संपन्न किया जाता है। स्वास्थ्य से सम्बन्धित विभिन्न कार्यो, योजनाओं और कार्यक्रमों के लिये प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र मूल बिन्दु की तरह काम करते हैं। इन सभी कार्यक्रमों को प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों द्वारा क्रियान्वित किया जाता है।यह कहा जा सकता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में त्वरित स्वास्थ्य सुविधा एवं देंखभाल हेतु प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र सर्व सुलभ माध्यम है। इसके अतिरिक्त प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र के मुख्य एवं महत्वपूर्ण कार्य निम्न हैः

- संक्रामक रोगों की रोकथाम करना।
- पर्यावरण स्वच्छता एवं संतुलन, शुद्ध पेयजल वितरण प्रणाली का निरीक्षण करना।
- मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य (MCH)
- स्कूल स्वास्थ्य कार्यक्रम
- परिवार नियोजन
- स्वास्थ्य शिक्षा
- राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रमों को क्षेत्र में क्रियान्वित करना।

प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र में नियमित चिकित्साधिकारी क्षेत्र में सभी स्वास्थ्य सम्बन्धी सुविधाएं प्रदान करने हेतु अधिकृत है। उक्त क्रम में एक चिकित्साधिकारी द्वारा मुख्यतः निम्न बिन्दुओं पर कार्य किया जाता है।

1. प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र बाह्य रोगी (OPD) विभाग को सम्भालना।
2. स्वास्थ्य केन्द्र की आन्तिरिक सेवाओं को व्यवस्थित रख सेवाएं प्रदान करना।
3. समस्त आपातकालीन सेवाओं हेतु उपस्थित रहना।
4. लैब से सम्बन्धित कार्यो का समन्वय करना।
5. प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र से गम्भीर रोगियों को उच्च चिकित्सा संस्थानों में रेफर करना।

प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र के चिकित्साधिकारी द्वारा क्षेत्र में स्वास्थ्य आदि पर कार्य कर रही समस्त संस्थाओं के साथ समन्वय स्थापित करना आवश्यक है। इसके साथ ही समस्त सरकारी विभाग यथा राजस्व, कृषि, शिक्षा आदि विभागों के साथ आवश्यक समन्वय व संयोजन स्थापित कर स्वास्थ्य सेवाओं को महत्ता प्रदान करना भी प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र के चिकित्साधिकारी कार्य है।

1.5: पीएचसी में संचालित महत्वपूर्ण कार्यक्रम (Important rogrammes in PHCs)

- **ग्रामीण स्वास्थ्य प्रशिक्षण संस्थानः** कुछ एक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों में मेडिकल कालेज के सामुदायिक चिकित्सा से सम्बन्धित कार्यो हेतु आवश्यक प्रशिक्षण उपलब्ध करवाने हेतु ग्रामीण स्वास्थ्य प्रशिक्षण संस्थान स्थापित किया जाता है। इस केन्द्र में स्वयं का स्टॉफ /कर्मचारी कार्यरत रहते है जो कि प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र के साथ आवश्यक समन्वय स्थापित कर स्वास्थ्य सेवाओं को क्षेत्र तक पहुंचाने का कार्य करते है जो कि मेडिकल में स्नातक कर रहे छात्रों के प्रशिक्षण हेतु आवश्यक है।
- **मातृ एंव शिशु स्वास्थ्यः** प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र में मातृ एंव शिशु स्वास्थ्य के अन्तर्गत गर्भवती महिलाओं की प्रसवपूर्व एवं प्रसव पश्चात नियमित जांचें प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र की पूर्ण जिम्मेदारी मानी गई है। केन्द्र के अधीन आच्छादित जनसंख्या में कोई भी प्रसव अप्रिशिक्षित द्वारा ना किया जाय। सरकार द्वारा प्रशिक्षत दाई व स्वास्थ्य कर्मियों द्वारा प्रसव कराये जाने के दिशा–निर्देशों के क्रम में 1993 से प्रशिक्षत स्वास्थ्य कर्मी द्वारा कराये गये प्रशव की दर बढ़कर 48.8 प्रतिशत तक पहुंच गई है।
- **परिवार नियोजनः** भारत सरकार द्वारा चलाये जा रहे परिवार नियोजन कार्यक्रम की सफलता एवं क्रियान्वयन में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण मानी गई हैं। परिवार नियोजन से सम्बन्धित समस्त सेवाओं को जनसामान्य तक पहुंचा स्वास्थ्य लाभ के सिद्धान्तों को क्रियान्वित करने में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र महत्वपूर्ण भूमिका निर्वहन करता है। चूंकि प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र दूरस्त ग्रामीण क्षेत्रों के जनमानस को स्वास्थ्य लाभ पहुंचाने का माध्यम है कारणवश प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र पर क्रियान्वित होने वाले कार्यक्रमों का आच्छादित जनसंख्या पर सीधा प्रभाव रहता है।
- **स्कूल स्वास्थ्य कार्यक्रमः** प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र के चिकित्सा अधिकारी से अपेक्षा की जाती है कि वह अपने क्षेत्र के अन्तर्गत आने वाले स्कूलों में छात्रों के स्वास्थ्य को दृष्टिगत रखते हुए समय–समय पर स्वास्थ्य जागरूकता कार्यक्रमों का आयोजन करें जिसके माध्यम से छात्रों को स्वास्थ्य सम्बन्धित जानकारी प्राप्त हो सकें।
- **राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रमः** भारत सरकार द्वारा एक बड़े पैमाने पर व्यक्ति के स्वास्थ्य में सुधार हेतु वृहद स्तर पर राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रमों को प्रारम्भ किया गया है। उक्त सभी कार्यक्रम परिवार स्वास्थ्य से सम्बन्धित है। उदाहरण के रूप में मलेरिया, फाइलेरिया, कुष्ठ रोग, तपेदिक, दृष्टि रोग आदि सम्बन्धित विभिन्न राष्ट्रीय कार्यक्रम वर्तमान में सफलतापूर्वक क्रियान्वित हो रहे है।

1.6: अन्य केन्द्रों का ढांचा (Structure of Other Centres)

सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र (Community Health Centres): सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों में (आई0पी0एच0एस0) इण्डियन पब्लिक हैल्थ स्टैन्डर्ड के मानकानुसार निम्नलिखित सेवाऐं आच्छादित जनसंख्या क्षेत्रों को उपलब्ध करवाना अति आवश्यक है। प्रत्येक सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र में इण्डियन पब्लिक हैल्थ स्टैन्डर्ड 2010 के अनुसार निम्न कार्मिक, चिकित्सकों का होना अनिवार्य एवं आवश्यक माना गया है। जो निम्न प्रकार है।

1. जनरल सर्जन – 01 (प्रस्तावित)
2. फिजीशियन– 01 (प्रस्तावित)

3. स्त्री एवं प्रसूति रोग विशेषज्ञ –01 (प्रस्तावित)
4. बाल रोग विशेषज्ञ – 01 (प्रस्तावित)
5. निस्चेतक –01 (प्रस्तावित)
6. पब्लिक हेल्थ मैनेजर – 01 (प्रस्तावित)
7. नेत्र सर्जन – 01 (प्रस्तावित)
8. दंत रोग विशेषज्ञ –01 (प्रस्तावित)
9. सामान्य कार्य चिकित्साधिकारी – 06 (प्रस्तावित) कम से कम दो महिला चिकित्सक
10. आयुर्वेद आयुष विशेषज्ञ –01 (प्रस्तावित)
11. सामान्य कार्य आयुष विशेषज्ञ –01 (प्रस्तावित)

सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र हेतु सहयोगी अन्य कर्मचारी

1. स्टाफ नर्स – 19
2. पब्लिक हैल्थ नर्स – 01
3. ए0एन0एम– 01
4. फार्मासिस्ट – 01
5. लैब टैक्नीशियन – 01
6. रेडियोग्राफर – 01
7. नेत्र सहायक– 01
8. वार्ड बॉय– 01
9. स्वच्छक – 01
10. पंजीकरण लिपिक– 01
11. लेखाकार – 01
12. डाटा इंटी आपरेटर – 01
13. ओ0पी0डी0 अटैण्डेन्ट – 02
14. सल्य सहायक – 01

जिला चिकित्सालय चूंकि जिले में एक ही होता है कारणवश जिले के प्रत्येक क्षेत्र के विभिन्न तरीके के रोगी उपचार हेतु यहां पर आते है। जिला चिकित्सालय में सामान्यतः वरिष्ठ फिजीसियन उच्च स्तर के सर्जन वरिष्ठ ऑख, कान, गला रोग विशेषज्ञ, नेत्र रोग विशेषज्ञ, दंत रोग विशेषज्ञ, निस्चेतक, रेडियोलॉजी विशेषज्ञ, हृदय रोग विशेषज्ञ आदि का होना आवश्क है। उक्त रोगों से सम्बन्धित विभिन्न इकाइयां जिला चिकित्सालय में कार्यरत रहती है।

1.7: निष्कर्ष (Conclusion)

उपरोक्त बिन्दुओं का क्रमवार आंकलन एवं विवेचन करने के उपरान्त यह तथ्य पाया गया है कि स्वास्थ्य सेवाओं को क्रमवद्ध रूप से क्रियान्वित करने हेतु सरकार द्वारा विभिन्न स्तरों पर चरणवद्ध रूप से स्वास्थ्य सेवाओं का ढाचा तैयार किया गया है। जनसंख्या अनुपात अनुसार प्रत्येक स्वास्थ्य केन्द्र की क्षमताओं एवं कार्यो का निर्धारण किया गया है ताकि स्वास्थ्य सेवाओं द्वारा आप जन सामान्य को लाभान्वित किया जा सकें।

1.8: सन्दर्भ (References)

1- Joseph G. Desrochers J.Kalathil M. Health Care in India Bangalore: Center for Social Actin. 4-6, 1994.
2- WHO Primary Health Care HFA Sr. No 1,1978
3- India Public Health Standards (IPHS) for Primary Helth Centres. Guidelines. Directorate Genral of Health Services. Ministry of Health and Family Welfare. Govermment of India. March 2006.
4- Primary Health Care : A Joint Report by the Dierector Generl of WHO and the Executive Director of UNICEF. 1978;2-6.23-3.2

इकाई -2
चिकित्सा से संबद्ध संस्थाएं (Allied Institutions)

2.1: उद्देश्य

2.2: परिचय

2.3: संबद्ध संस्थाएं

2.4: निष्कर्ष

2.5: सन्दर्भ

2.1: उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के निम्न उद्देश्य है–

- चिकित्सा–स्वास्थ्य से संबद्ध संस्थाओं का परिचय
- परिवार का महत्व एवं पड़ोसी की भूमिका
- परिवार के साथ सम्बन्ध संस्थाओं आदि की भूमिका
- गैर सरकारी सस्थाऐं एवं उनके स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्य

2.2: परिचय (Introduction)

व्यक्ति के स्वास्थ्य की उचित देखभाल हेतु जहां विभिन्न स्तरों पर चिकित्सालय स्थापित हैं वहीं इनके साथ–साथ अन्य सस्थानों परिवार व पडोसी आदि का भी स्वास्थ्य देखभाल में अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान होता है। प्रायः देखा गया है कि सरकारी चिकित्सालय की दूरी और आवागमन का साधन समय पर रोगी की देखभाल में प्रतिकूल भूमिका निभाते हैं। ऐसे समय में रोगी को प्राथमिक उपचार प्रदान रकने में अन्य चिकित्सालय से सम्बद्ध संस्थानों, परिवार व पड़ोसी आदि की महत्वपूर्ण भूमिका परिलक्षित होती पाई गई है। विभिन्न शोधों में यह तथ्य सामने आया है कि परिवार या पड़ोसी के द्वारा प्रदान की जाने वाली प्राथमिक चिकित्सा द्वारा रोगी की जान बचाई जा सकती है। इस हेतु यह भी अति आवश्यक है कि विभिन्न संस्थानों परिवार व पड़ोसियों को आवश्यक तत्काल प्राथमिक उपचार का संक्षिप्त ज्ञान विभिन्न माध्यमों द्वारा प्रदान किया जाय।

2.3: संबद्ध संस्थाएं (Allied nstitutions)

विभिन्न गैर सरकारी संगठन क्षेत्र में कार्यरत जन जागरूकता समूह द्वारा समय –समय पर क्षेत्र में जाकर सामुदायिक जागरूकता सभाओं का आयोजन किया जाता है। जिसमें व्यावहारिक रूप से गम्भीर बीमारियों में प्राथमिक उपचार के सम्बन्ध में बतलाया जाता है। यह भी देखने में आया है कि ऐसे जागरूकता कार्यक्रमों द्वारा समुदाय में जागरूकता उत्पन्न हुई है जो कि कई रोगियों को तत्काल प्राथमिक उपचार देकर जान बचाने में कारगर सिद्ध हुई है। उक्त क्रम सम्बद्ध संस्थाओं से तात्पर्य ऐसी संस्थाओं से है जो कि सरकार द्वारा स्थापित स्वास्थ्य सेवाओं के साथ आवश्यक समन्वय स्थापित कर दुर्गम अतिदुर्गम क्षेत्रों तक विभिन्न माध्यमों द्वारा स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध कराने का कार्य करती हैं।

उदाहरण के रूप में सरकार द्वारा क्रियान्वित पुनरक्षित राष्ट्रीय तपेदिक नियंत्रण कार्यक्रम (RNTCP) इसके अन्तर्गत सरकार द्वारा कार्यक्रम के सफल क्रियान्वयन हेतु रोगियों की सुविधा के लिए क्षेत्र में डाट्स प्रोवाइडर बना दिये गये है ताकि रोगी को अपने घर से दूर चिकित्सालय तक दवा लेने न जाना पड़े। इसी क्रम में सम्बद्ध संस्थाओं को साथ लेकर राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रम (NACO), विभिन्न संक्रामक रोगों एवं तत्तकाल चिकित्सकीय आपदा से सम्बन्धित कार्यक्रमों के सफल एवं सुचारू क्रियान्वयन हेतु आवश्यक सहयोग लिया जाता रहा है जिसके परिणाम भी सकारात्मक पाये गये है।

गैर सरकारी सस्थाऐं एवं उनके स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्य

इस तरह विभिन्न गैर सरकार संगठन (एन.जी.ओ.) सरकार के साथ समन्वय स्थापित कर स्वास्थ्य सुविधाओं को आम जन सामान्य तक पहुंचाने का कार्य कर रहे है। यह कहना कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी कि स्वास्थ्य सेवाओं में सम्बद्ध संस्थाओं की भूमिका भी अति महत्वपूर्ण है। इसी तरह यह भी देखने में आया कि ग्रामीण क्षेत्रों में बिना आवश्यक डिग्री डिप्लोमा के व्यक्ति चिकित्सकीय कार्य करते है जो कि पूर्णतः सरकार द्वारा प्रतिबन्धित एंव अवैध हैं। किन्तु शोध में यह तथ्य भी उजागर हुए है कि डायरिया जैसी बीमारियों में उक्त कथित चिकित्सकों द्वारा समय पर रोगी को उपचार दें डिहाइड्रेशन (पानी की कमी) से होने वाली मृत्यु से बचाया गया है। कारण स्पष्ट है कि उक्त कथित चिकित्सक ग्रामीण क्षेत्र में अन्दर तक पहुंचकर अपना व्यवसाय करते है यहां तक देखने में आया है कि उक्त तथा कथित चिकित्सकों द्वारा चिकित्सा हेतु धनराशि न होने पर उधार पर भी रोगी का उपचार किया जाता है।

उपरोक्त तथ्यों के विवेचन पश्चात यह स्पष्ट होता है कि सम्बद्ध संस्थाओं परिवार एंव पड़ोसी आदि का भी स्वास्थ्य सुविधा प्रदान करने या यह कहा जा सकता है कि प्राथमिक देखभाल में अत्यधिक महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

2.4: निष्कर्ष (Conclusion)

समाज सेवा एवं परिवार पड़ोसी व सम्बन्ध संस्थाओं के सम्बन्ध में आंकलन करने पर ज्ञात होता है कि स्वास्थ्य सेवा के मजबूत ढांचे के खडे रहने के पीछे कार्यरत सम्बन्ध संस्थाएं परिवार व पड़ोसी का भी एक अति महत्वपूर्ण योगदान रहता है जबकि समान्यतः स्वास्थ्य के साथ हम परिवार एवं सम्बद्ध संस्थाओं की अनदेखी करते है किन्तु विभिन्न अध्ययन एवं व्यवहारिक रूप में यह पाया गया है कि स्वास्थ्य सेवाओं को उच्च स्तर प्रदान करते हुए किसी भी व्यक्ति की जान बचाने के पीछे परिवार पड़ोसी एवं सम्बन्ध संस्थाओं की भूमिका अति महत्वपूर्ण होती है। इस सम्बन्ध में समय–समय पर किये गये शोध कार्य इसकी पुष्टि करते

है। यह निर्विवाद सत्य है कि स्वास्थ्य सेवा के तत्काल स्तर को प्रथम बिन्दु मानते हुए परिवार, पड़ोसी एवं सम्बद्ध संस्थाओं की एक महत्वपूर्ण एवं जिम्मेदारी से पूर्ण भूमिका होती है।

2.5: सन्दर्भ (References)

1. Govt. of India. Report of the Committee on integration of Health Serveices. New Delhi: Ministry of Health,19967.
2. Govt. of India. Report of the Committee on Multipurpose Workers under Health and Family Planning Programe. New Delhi. Ministry of Health 1973.
3. Govt. of India. Report of the Group on Medical Education and Support Manpower. New Delhi: Ministry of Health, 1975.

इकाई -3
औषधि (Pharmaceuticals)

3.1: उद्देश्य

3.2: परिचय

3.3: औषधियों के रखरखाव के चरण

3.4: औषधि वितरण नियम

3.5: औषधियों का वर्गीकरण

3.6: निष्कर्ष

3.7: सन्दर्भ

3.1: उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के निम्न उद्देश्य हैं–

1. औषधि के सम्बन्ध में जानना ।
2. जीवन रक्षा हेतु औषधियों का महत्व।
3. औषधियों की रोगानुसार महत्ता, प्रकार।
4. औषधियों की आवश्यक रखरखाव हेतु विभिन्न चरणों का ज्ञान।
5. औषधि वितरण एवं नियम।

3.2: परिचय (Introduction)

स्वास्थ्य सेवाओं की प्राप्ति एवं उपचार हेतु एक अहम बिन्दु औषधी (Medicine) मानी गई है। अर्थात उन स्वास्थ्य सुविधा आम जन सामान्य को तभी पूर्ण रूप से प्राप्त होती है जब उसे आवश्यक उपचार पद्धति में रोगानुसार औषधियां प्राप्त हो। उपरोक्त के संदर्भ में यह जानना भी अति आवश्यक है कि पूर्ण स्वास्थ्य ढांचे में औषधि का क्या स्थान है? किसी भी चिकित्सालय चाहे वह उप केन्द्र, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र, जिला चिकित्सालय या मेडिकल कालेज हो वहां पर दवाईयों के भण्डारण हेतु समुचित व्यवस्था एवं क्रमवद्ध रूप से औषधी वितरण हेतु आवश्यक कर्मचारी एवं स्थान हो । इस हेतु आवश्यक व्यवस्था सभी स्वास्थ्य सुविधा प्रदान करने वालें केन्द्रों में उनकी क्षमतानुसार संरचना में निर्धारित

की गई है।। दवाओं हेतु प्रत्येक चिकित्साल में उप औषधालय, औषधालय एवं केन्द्रीय औषधालय का होना अति आवश्यक है। उपरोक्त क्रम में केन्द्रीय औषधालय द्वारा स्वास्थ्य केन्द्रों की मांग के अनुरूप दवाईयों की आपूर्ति सुनिश्चत की जाती है।

3.3: औषधियों के रखरखाव के चरण (Steps of Maintening Pharmaceuticals)

यहां पर यह जानना अति आवश्यक है कि प्रत्येक स्वास्थ्य केन्द्र में दवाइयों की आपूर्ति केन्द्र की क्षमता व चिकित्सालय की बैड क्षमतानुसार ही की जाती है। इसमें उप केन्द्र को दी जाने वाले औषधियां उसी स्तर की प्रदान की जाती है जो कि केन्द्र में कार्यरत स्वास्थ्य कार्यकर्ता या ए0एन0एम0 स्तर की हो। इस हेतु भारत सरकार द्वारा ड्रग सैड्यूल बनाया गया है जिसमें प्रत्येक दवा किस स्तर के कर्मचारी/चिकित्सक के द्वारा दी जानी है। इस हेतु आवश्यक दिशानिर्देश दिये गये है। औषधि कार्यो हेतु यह भी आवश्यक माना गया है कि दवाओं के रख रखाव के लिए कर्मचारियों को आवश्यक एवं उच्च स्तर का प्रशिक्षण प्राप्त हो ताकि केन्द्रों से प्राप्त औषधियों का निर्देसानुसार आवश्यक रख रखाव किया जा सकें। औषधालय में कार्यरत समस्त फार्मसिस्ट के लिए आवश्यक है किवह वाछित शैक्षिक योग्यता के साथ पूर्ण रूप से प्रशिक्षत हो ताकि औषधियों के रख रखाव एवं वितरण में किसी प्रकार की त्रुटि न होने पाये। औषधि वितरण में त्रुटि जन हानि की प्रतीक मानी गई है। एक फार्मेसी के अन्दर दवाओं के रखरखाव एवं उनको निर्धारित तापमान पर रखने हेतु आवश्यक उपकरणों, संयत्रों का होना आवश्यक है साथ ही निश्चित तापमान पर रखी गई औषधियों का प्रत्योक दिवस तापमान पंजीकाओं में अंकित होना आवश्यक माना गया है। यहां पर यह भी स्पष्ट करना आवश्यक है कि स्वास्थ्य केन्दों की क्षमतानुसार प्रत्येक स्वास्थ्य केन्द्र पर जीवन रक्षक औषधियों का होना अत्यावश्यक है। इस हेतु स्पष्ट निर्देश केन्द्रीय औषधि निदेशालय द्वारा दिये गये हैं।

3.4: औषधि वितरण नियम (Pharmaceutical Distribution Rules)

1. अलग–अलग श्रेणी की दाओं के रखरखाव हेतु अलग–अलग कैबिनेट को होना आवश्यक है।
2. वाह्य रूप से प्रयोग होने वाली औषधियों को आन्तिरिक रूप से प्रयोग होने वाली औषधियों से अलग रखा जाना चाहिए।
3. विषैली औषधियों अलग कपबोर्ड (अलमारी) में ताला लगाकर रखना चाहिए।
4. विषैली औषधियों वाली अलमारी किसी वरिष्ठ स्वास्थ्य कर्मचारी के प्रभार में दी जानी चाहिए।
5. समस्त विषैली औषधियों में लाल स्याही से बिष लिखकर रखा होना चाहिए।
6. प्रत्येक औषधि की समाप्ति दिनांक एवं बैच न0 स्पष्ट रूप से लिखा होना आवश्यक है।
7. आपातकालीन औषधिया ऐसे स्थान पर रखी होनी चाहिए जहां पर आपात स्थिति में तत्काल सुगमता से उपलब्ध हो सकें।

औषधियों का वितरण इस प्रकार हो कि उसके सर्वोत्तम परिणाम प्राप्त हो सकें। इसके लिए आवश्यक है कि वितरण करने वाले को सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त हो। उदाहरण के रूप में–

1. औषधि की प्रकृति अर्थात दवाई का नाम वर्गीकरण प्रभाव व मात्रा।
2. औषधि आदेश के आवश्यक भाग को संरक्षित रखना।
3. औषधि लिखने में प्रयुक्त संक्षिप्त रूप एवं संकेत।

4. उपयोग में आने वाले माप तोल ।
5. दवाइयां देने के नियम।

औषधियों के समुचित एवं नियमानुसार वितरण हेतु यह आवश्यक है कि सर्वप्रथम औषधि नियंत्रक भारत सरकार द्वारा दी गई गाइडलाइन का भलीभॉति ज्ञान हो। एक फार्मासिस्ट, चिकित्सा के लिए अतिआवश्यक है कि वह औषधि नियंत्रक भारत सरकार के दिशानिर्देशों का गम्भीतापूर्वक पालन करें। चिकित्सक द्वारा लिखी जाने वाली औषधि आदेश में 6 मुख्य बातें होती है। दवा मरीज को सुरक्षित रूप से दी जा सकें इसके लिए आवश्यक है कि औषधि आदेश सही तरीके से पढ़ना आता हो।

1. मरीज (रोगी) का नाम।
2. औषधि का नाम।
3. औषधि की मात्रा या खुराक।
4. देने की विधि।
5. दिनांक
6. चिकित्सक के हस्ताक्षर

3.5: औषधियों का वर्गीकरण (Classification of Pharmaceuticals)

औषधियों को ऐसे पदार्थ के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो निम्नलिखित प्रयोजन से दिये जा सकते है–

1. स्वास्थ्य की उन्नति हेतु ।
2. रोगो से बचाव हेतु।
3. रोगों के निदान हेतु ।
4. रोगों के प्रभाव को कम करने हेतु

सभी औषधियों के दो नाम होते है एक रासायनिक एवं दूसरा व्यपारिक रासायनिक जिससे फार्मासिस्ट परिचित रहते है। एक ही प्रकार की औषधि कई व्यपारिक संगठन द्वारा बनाई जा सकती है। इसलिए उनके कई नाम हो सकते है किन्तु उसका रासायनिक नाम केवल एक ही हो सकता है। उदाहरण के रूप में पैरासिटामॉल एक रासायनिक नाम है जबकि व्यापारिक रासायनिक नाम से कालपोल, मैटासिन, क्रोसिन आदि दवा उपलब्ध हैं। औषधियों को कई प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है। उनके संगठन, उनकी क्रिया व उनके उपयोगों के आधार पर उनका वर्गीकरण निम्न प्रकार है–

1- पीड़ाहारी या दर्द निवारक (analgesic)

2. संवेदनाहारी या निष्चेतक (anaespattich)

3. कृमिनाशक (vermifuges)
4. ज्वरनाशक (antipyritics)
5- प्रतिकार या विष निवारक (antidotes)
6. प्रतिसंक्रामक या संक्रमण रोधी (antiinfectives)
7. प्रर्धा रोधी (antiinflamnatoruy)
8. स्कन्ध रोधी (anticoagulants)
9. हिस्टेमिन रोधी (antihistamin)
10- एन्टासीड या अम्ल रोधी (antacids)
11. प्रतिजैविक (antibiotics)
12. कफ रोधी (antitussive)
13- दमा रोधी (antiasthmatics)
14- तपेदिक रोधी (antitubdercular)
15- रक्त शर्करा रोधक (hypoogalycaemics)

औषधियां प्रमुख रूप रोग निदान हेतु प्रयोग की जाती है। औषधियां बाजार में कई रूपों में उपलब्ध रहती है इसी के अनुरूप इनको देने की विधि भी रहती है।यहां यह ध्यान रखा जाना अतिआवश्यक है कि दवाइयों के वांछित एवं ठीक स्वरूप का उल्लेख हो।

3.6: निष्कर्ष (Conclusion)

औषधि फार्मासुटिकल जैसे महत्वपूर्ण विषय के सम्बन्ध में आधारभूत जानकारी प्राप्त करने पर यह तथ्य परिलक्षित होता है कि औषधियां स्वास्थ्य सेवा का एक महत्वपूर्ण भाग है। या यह कहा जा सकता है कि दोनों एक दूसरे के पूरक है। स्वास्थ्य सेवा तबतक पूर्ण नहीं मानी जा सकती जबतक कि उसमें औषधि अनुभाग की अपनी महत्वपूर्ण भूमिका न हो। विवेचन में यह तथ्य भी स्पष्ट होता है कि औषधियों की किसी भी व्यक्ति के जीवन रक्षा हेतु अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं उच्च स्तर की भूमिका होती है।

3.6: निष्कर्ष (Conclusion)

- WHO. Planning and Programing for Nursing Services. Public Health Papers No. 197; 44.

- Govt. of India Report of the Health Survey and Development Committee. Shimla: Govt. of India Press, 1946.
- Planning Commission, Govt. of India. Draft Approvel Paper to Tenth Five Year Plan (2002-2007). Published on May 1, 2001.

इकाई -4
भारत में स्वास्थ्य नियोजन एवं नीतियां (Health Planning and Policy in India)

4.0: उद्देश्य
4.1: परिचय
4.2: भारत में स्वास्थ्य नियोजन
4.3: विभिन्न स्वास्थ्य समितियां और उनके सुझाव
4.4: पंचवर्षीय योजनाओं में स्वास्थ्य नियोजन
4.5: भारत में स्वास्थ्य नीतियां
4.6: भारत में स्वास्थ्य कार्यक्रम
4.7: निष्कर्ष
4.8: अभ्यास प्रश्न
4.9: सहायक अध्ययन

4.0: उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई में हम भारत में स्वास्थ्य सेवाओं की जरूरतों और इनके लिये आवश्यक नीतियों, नियोजन की जानकारी हासिल करेंगे।

4.1: परिचय (Introduction)

भारतीय संविधान में हर नागरिक को बेहतर स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध कराने के लिये सरकार की जिम्मेदारी तय किये जाने के बावजूद भारत में स्वास्थ्य और स्वास्थ्य सेवाएं कभी प्राथमिकता में नहीं रहीं। संविधान में कई अनुच्छेदों में देश के नागरिकों के अच्छे स्वास्थ्य को बनाये रखने की बात कही गयी है। दुनियाभर में विकसित देशों में अपनी आबादी की सेहत के लिये विशेष स्वास्थ्य योजनाएं चलायी जाती हैं, जिनमें स्वास्थ्य बीमा या सरकार द्वारा संचालित स्वास्थ्य सेवाएं अथवा दोनों शामिल हैं। विकासशील देशों में यह संभव नहीं हो पाता। इसका एक मुख्य कारण यह है कि विकास में बाधक बनने वाले कारक ही अविकसित

स्वास्थ्य सेवाओं के लिये जिम्मेदार हैं। सकल घरेलू उत्पाद का महज 1.2 प्रतिशत स्वास्थ्य पर खर्च करने से इस मामले में भारत काफी पीछे है।

4.2: भारत में स्वास्थ्य नियोजन (Health Planning in India)

स्वतंत्र भारत में वर्ष 1983 तक संगठित स्वास्थ्य नीति नहीं थी। तब तक केन्द्र सरकार की ओर से इस दिशा में कार्यक्रमों का ही संचालन किया जाता था, जिनके लिये सरकार विभिन्न परिषदों, समितियों से सुझाव लेती थी। यद्यपि स्वास्थ्य राज्य का विषय है, लेकिन राज्य सरकारों के स्तर पर भी इस दिशा में कोई पहल होती नहीं थी। स्वास्थ्य कार्यक्रमों का संचालन केन्द्र सरकार पंचवर्षीय योजनाओं के तहत करती थी। इनमें से अधिकतर कार्यक्रम संरक्षा अथवा प्रोत्साहन आधारित थे, उदाहरण के लिये महामारी नियंत्रण और शिशु–मातृ स्वास्थ्य कार्यक्रम। इन कार्यक्रमों के संचालन के लिये कोष की व्यवस्था केन्द्र सरकार करती थी। सफाई और अन्य स्वास्थ्य देखभाल संबंधी लक्ष्यों जैसे मेडिकल कॉलेज, अस्पताल, डिस्पेंसरी आदि की स्थापना के लिये राज्य सरकारों को अपने स्तर पर ही संसाधनों और कोष की व्यवस्था करनी होती थी। जनसंख्या नियंत्रण, परिवार कल्याण, चिकित्सा शिक्षा, दवा निर्माण एवं नियंत्रण जैसे कुछ कार्यक्रम राज्य और केन्द्र दोनों सरकारों के समन्वय से चलाये जाते हैं। ऐसे कार्यक्रमों में आर्थिक व्यवस्था का कुछ हिस्सा केन्द्र सरकार की ओर से तो कुछ भाग राज्य सरकार की ओर से दिया जाता है।

4.3: विभिन्न स्वास्थ्य समितियां और उनके सुझाव (Various Health Committees and Recommendations)

सोखे समिति (Sokhey Committee, 1938)

भारत की पहली समिति थी, जिसने देश के लोगों की स्वास्थ्य हालत पर ध्यान दिया। वर्ष 1938 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने यह समिति गठित की थी। समिति ने देशभर में कुपोषण और सफाई की व्यवस्था नहीं होने की समस्या को प्रमुख रूप से उठाया गया। उस दौर में भारत में मलेरिया, चेचक, हैजा, आंत्रज्वर, टिटनस, टीबी और डिप्थीरिया जैसे संक्रामक रोगों से लोग बहुतायत में पीड़ित होते थे। समिति ने देश में उपलब्ध स्वास्थ्य सुविधाओं के बिखराव को भी उभारा। समिति ने उपचार और संरक्षा दोनों कार्यों को एकीकृत करने का सुझाव देते हुये स्वास्थ्यकर्मियों को लोगों और समुदायों में स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता अभियान चलाने, प्राथमिक उपचार, सामान्य स्वास्थ्य उपचार का प्रशिक्षण देने की जरूरत जतायी। समिति ने आयुर्वेद और यूनानी चिकित्सा पद्धतियों के राज्य की स्वास्थ्य व्यवस्था में एकीकरण और इन पद्धतियों से जुड़े लोगों को प्रशिक्षण देने का सुझाव दिया।

बोहरे समिति (Bohre Committee, 1946)

भारत में स्वास्थ्य की स्थिति पर सबसे पहली और सर्वाधिक महत्वपूर्ण रिपोर्ट पेश की। सर जोजेफ बोहरे इसके अध्यक्ष थे, जिन्होंने ब्रिटिश भारत में स्वास्थ्य संगठनों, व्यवस्थाओं की तत्कालीन हालत और भावी विकास के लिये सुझाव दिये। उस समय तक राष्ट्रीय स्तर पर इससे पहले कार्यढांचा तय करने को लेकर ऐसी कोई रिपोर्ट नहीं आयी थी। 1946 में पेश की गयी इस 'स्वास्थ्य सर्वेक्षण एवं विकास' रिपोर्ट में देश में उपलब्ध स्वास्थ्य सेवाओं और सुविधाओं की समीक्षा की गयी और स्वास्थ्य प्रशासन के भविष्य को इंगित

किया गया। बोहरे समिति को भारत में सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवा का प्रतीकचिह्न माना जाता है, क्योंकि इस रिपोर्ट में ही सबसे पहले प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं और तीन चरणीय स्वास्थ्य सेवाओं का सुझाव दिया गया।

समिति ने सर्वे के दौरान पाया कि भारत में स्वास्थ्य स्तर बेहद कमजोर था। मृत्युदर काफी अधिक थी और जन्मोपरांत औसत जीवन प्रत्याशा महज 27 साल थी। समिति ने स्पष्ट किया कि स्वास्थ्य और विकास परस्पर निर्भर हैं। समिति ने पोषण, सफाई, जल वितरण और बेरोजगारी को स्वास्थ्य से जुड़े अहम कारकों में शामिल किया। समिति ने मलेरिया, टीबी, चेचक, कुष्ठ, प्लेग, हैजा, फिलेरियासिस, यौन रोगों और मनोरोगों के उपचार के लिये विशेष प्रयासों की जरूरत जतायी। समिति ने पाया कि अधिकतर स्वास्थ्य समस्याओं का उपचार और संरक्षण संभव है, इसलिये समिति ने उपचार और संरक्षण संबंधी कार्यों के प्रशासनिक स्तर पर एकीकरण पर जोर दिया और सुझाव दिया कि मरीज के इलाज के दौरान दोनों तरह की गतिविधियां समान्तर संचालित की जानी चाहिये। समिति ने ग्रामीण आबादी पर विशेष ध्यान केन्द्रित किया और इस बात पर जोर दिया कि स्वास्थ्य व्यवस्था लोगों के नजदीक उपलब्ध होनी चाहिये। समिति ने उपचार और संरक्षण दोनों तरह की स्वास्थ्य सेवाओं को निःशुल्क उपलब्ध कराने का भी सुझाव दिया, ताकि किसी भी पीड़ित को भुगतान नहीं कर पाने की स्थिति का सामना नहीं करना पड़े। आधुनिक चिकित्सा सेवा में परीक्षण, उपचार, परामर्श, प्रयोगशाला आदि की जटिलताओं को समझते हुये समिति ने सामूहिक उपचार प्रक्रिया का सुझाव दिया, जिसमें सभी कार्य एकसाथ, एक ही स्थान पर उपलब्ध हों।

समिति ने पाया कि तत्कालीन प्रति एक लाख आबादी पर न्यूनतम 567 बेड का अस्पताल, 62 डॉक्टर और 151 नर्सों की आवश्यकता है। ऐसे में समिति ने देशभर में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों की स्थापना की जरूरत जतायी, जो तीन चरणों की स्वास्थ्य सेवाओं का प्रारंभ हो। समिति ने तीन चरणों में स्वास्थ्य सेवाओं के तहत प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, द्वितीयक केन्द्र और जिला अस्पताल की कल्पना दी, जिनका लक्ष्य तीन लाख आबादी को स्वास्थ्य सेवाएं देना हो। समिति ने स्पष्ट किया कि चिकित्सक को सामाजिक चिकित्सक (Social Physician) होना चाहिये, इसके लिये समिति ने चिकित्सा शिक्षा के दौरान तीन माह के विशेष कोर्स की जरूरत जतायी, जिसके तहत संरक्षण और उपचार के सामाजिक तरीकों का प्रशिक्षण दिया जाये। समिति का दृष्टिकोण न सिर्फ घर, बल्कि कार्यस्थल पर भी स्वास्थ्य को बरकरार रखने का था। समिति ने माताओं और शिशुओं के लिये विशेष कार्यक्रम चलाने और औद्योगिक कर्मचारियों के लिये विशेष स्वच्छता व व्यावसायिक स्वास्थ्य कार्यक्रमों के संचालन का सुझाव दिया।

बोहरे समिति के प्रस्तावों को भारत सरकार ने वर्ष 1952 में मंजूर किया, लेकिन इन पर आंशिक रूप से ही काम हो सका। स्वास्थ्य नीति के लिहाज से इसे पहला दस्तावेज माना जाता है। लेकिन, आज भी 80 प्रतिशत ग्रामीण, पिछड़े वर्गों, महिलाओं की आबादी के लिहाज से देखें तो बोहरे समिति के सुझावों को अमल में नहीं लाया जा सका है। बोहरे समिति के बाद कई अन्य समितियां भी इस दिशा में बनीं। इनमें मुदालियर कमेटी (1959), चड्ढा कमेटी (1963), मुखर्जी कमेटी (1965), जुगलवाला कमेटी (1967), करतार सिंह कमेटी (1973), श्रीवास्तव कमेटी (1975) और बजाज कमेटी (1985) शामिल हैं। इन सभी ने समय–समय पर जनता की स्वास्थ्य जरूरतों और इनकी पूर्ति के लिये आवश्यक कदमों पर अपनी रिपोर्ट पेश कीं।

मुदालियर समिति (Mudaliar Committee, 1959)

बोहरे कमेटी की रिपोर्ट और प्रारंभिक दो पंचवर्षीय योजनाओं में स्वास्थ्य क्षेत्र में किये गये कार्यों और इनके परिणामों के मूल्यांकन के लिये मुदालियर समिति का गठन किया गया था। समिति ने पाया कि अधिकतर प्राइमरी स्वास्थ्य केन्द्रों में स्टाफ की कमी थी और इनमें से कई सिर्फ स्वास्थ्यकर्मियों के भरोसे चल रहे थे। समिति ने स्पष्ट किया कि विभिन्न रोग नियंत्रण कार्यक्रमों ने महामारियों पर रोकथाम की दिशा में विशेष सफलता हासिल की। समिति ने भारतीय प्रशासनिक सेवा (All India Administrative services) की तरह भारतीय स्वास्थ्य सेवा (All India Health Services) की व्यवस्था का सुझाव दिया।

चड्ढा समिति (Chadha Committee, 1963)

इस समिति का गठन मलेरिया उन्मूलन कार्यक्रम के लिये आवश्यक व्यवस्थाओं और कदमों की जानकारी के लिये किया गया था। समिति ने सुझाव दिया कि कार्यक्रम के सफल संचालन के लिये बुनियादी स्वास्थ्यकर्मियों के साथ गतिविधियों को चलाना जरूरी है। समिति ने यह भी बताया कि ये कर्मचारी बहुद्देश्यीय कर्मचारी के तौर पर काम करेंगे। मलेरिया कार्यक्रम के अलावा वे परिवार नियोजन और सांख्यिकीय आंकड़ों के संग्रहण का भी काम करेंगे।

मुखर्जी समिति (Mukherjee Committee, 1965)

चड्ढा समिति की सिफारिशों को अव्यावहारिक पाये जाने पर इस समिति का गठन किया गया। चड्ढा समिति की सिफारिश इस लिहाज से अव्यावहारिक पायी गयी कि स्वास्थ्य कर्मियों के लिये मलेरिया उन्मूलन और परिवार नियोजन (तत्कालीन दो बड़े स्वास्थ्य कार्यक्रम) की जिम्मेदारी एकसाथ संभाल पाना संभव नहीं था। मुखर्जी समिति ने सुझाव दिया कि परिवार नियोजन कार्यक्रम के लिये अलग से कर्मचारियों की व्यवस्था की जानी चाहिये, जबकि मलेरिया उन्मूलन कार्यक्रम के लिये स्वास्थ्यकर्मियों को लगाया जा सकता है।

जुगलवाला समिति (Jugalwalla Committee, 1967)

इस समिति का गठन विभिन्न स्वास्थ्य सेवाओं के एकीकरण और सरकारी सेवारत चिकित्सकों के निजी प्रैक्टिस करने पर रोक लगाने के मकसद से किया गया था। समिति ने सुझाव दिया कि सभी चिकित्सा उपचार और सार्वजनिक स्वास्थ्य कार्यक्रमों का एकल मुख्य प्रशासक होना चाहिये, जिसका निर्धारण पदानुक्रम से हो। समिति ने सेवारत चिकित्सकों के लिये एकीकृत काडर और वरिष्ठता के मूल्यांकन का भी सुझाव दिया।

करतार सिंह समिति (Kartar Singh committee, 1973)

यह समिति इसलिये महत्वपूर्ण रही, क्योंकि मौजूदा ग्रामीण स्वास्थ्य ढांचा इस समिति के प्रस्तावों और सुझावों का ही परिणाम है। समिति ने सुझाव दिया कि विभिन्न श्रेणियों के द्वितीय दर्जे के कर्मचारियों को बहुउद्देश्यीय कर्मचारी के तौर पर जिम्मेदारी देनी चाहिये। समिति ने प्रति 50 हजार आबादी पर एक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र की स्थापना की सलाह दी और यह भी सुझाव दिया कि हर स्वास्थ्य केन्द्र को 16

उपकेन्द्रों में विभाजित किया जाये, जिनमें से हरेक में कम से कम एक पुरुष और एक महिला स्वास्थ्यकर्मी तैनात हो।

श्रीवास्तव समिति (Shrivastav Committee, 1975)

इस समिति का गठन देश की जरूरतों के हिसाब से चिकित्सा शिक्षा के पुनर्गठन और स्वास्थ्य सहायकों के लिये पाठ्यक्रम के विकास के मकसद से किया गया। स्वास्थ्य सहायकों का अर्थ उन कर्मचारियों से है, जो बहुउद्देश्यीय कर्मचारियों और स्वास्थ्य अधिकारियों के बीच की कड़ी हों। समिति का महत्वपूर्ण सुझाव था, 'जनता का स्वास्थ्य जनता के हाथों में' इसका तात्पर्य यह है कि जनता के स्वास्थ्य की देखभाल के लिये समाज के बीच ही स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं की आवश्यकता है। समिति ने स्पष्ट किया कि ये कार्यकर्ता स्वास्थ्य उपविशेषज्ञ हो सकते हैं, जिनमें शिक्षक, पोस्टमास्टर आदि हों। यानी ये लोग अपने मूल काम के साथ स्वास्थ्य संबंधी छोटी जरूरतों को पूरा कर सकें। समिति का महत्वपूर्ण सुझाव चिकित्सा एवं स्वास्थ्य शिक्षा आयोग (Health and Medical Education Commission) का गठन था जो चिकित्सा शिक्षा में आवश्यक सुधारों को लागू और नियोजित कर सके। इसका गठन विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) की तर्ज पर करने का सुझाव दिया गया। समिति के प्रस्तावों और सुझावों को 1977 में मंजूर किया गया और ग्रामीण स्वास्थ्य योजनाओं में इन्हें लागू किया गया।

बजाज समिति (Bajaj Committee, 1985)

समिति का गठन स्वास्थ्य क्षेत्र में श्रमशक्ति, उत्पादन और प्रबंधन के मूल्यांकन के लिये किया गया। समिति ने राष्ट्रीय चिकित्सा एवं स्वास्थ्य शिक्षा नीति और राष्ट्रीय स्वास्थ्य श्रम नीति (National Health Manpower Policy) के गठन का सुझाव दिया। समिति के सुझावों में स्वास्थ्य विज्ञान शिक्षा आयोग और विभिन्न राज्यों तथा केन्द्रशासित प्रदेशों में चिकित्सा विश्वविद्यालयों की स्थापना भी शामिल थे। पराचिकित्सा (Paramedical) क्षेत्र में कर्मियों की संख्या में बढ़ोतरी और प्रशिक्षण के लिये इंटरमीडिएट स्तर पर चिकित्सा व्यावसायिक शिक्षा पाठ्यक्रम प्रारंभ करने का भी सुझाव दिया।

4.4: पंचवर्षीय योजनाओं में स्वास्थ्य नियोजन (Health Planning Through Five year Plans)

भारत में पहली स्वास्थ्य नीति के निर्धारण से पूर्व स्वास्थ्य गतिविधियां विभिन्न समितियों के सुझावों–सलाहों के आधार पर पंचवर्षीय योजनाओं में शामिल की जाती थीं। अब हम जानेंगे कि विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में कौन–कौन सी गतिविधियों, कार्यक्रमों और लक्षित योजनाओं को शामिल किया गया था।

- **पहली पंचवर्षीय योजना वर्ष 1951 से 1956** तक चली, जबकि **दूसरी पंचवर्षीय योजना का कार्यकाल 1956 से 1961** तक रहा। इन दोनों योजनाओं में बोहरे कमेटी के कुछ सुझावों को लागू किया गया, जिनमें मुख्यतः मलेरिया, चेचक जैसी महामारियों से निपटने का लक्ष्य अहम रहा। इसी

अवधि में विश्व स्वास्थ्य संगठन (World Health Organization: WHO) की मदद से राष्ट्रीय मलेरिया उन्मूलन कार्यक्रम प्रारंभ हुआ। उस दौर में मलेरिया भारत ही नहीं, बल्कि दुनियाभर के लिये चिंता का विषय था। इसी अवधि में क्षयरोग (TB) उपचार कार्यक्रम भी शुरू हुये, जिसके तहत बीसीजी टीकाकरण, क्षयरोग अस्पताल, आवासीय चिकित्सा सेवा (Domiciliary Medical Services) और उपचारोपरांत देखभाल के कार्यक्रम संचालित किये गये। स्वास्थ्यकर्मियों को चेचक, कुष्ठरोग, हाथीपांव (Filariasis), हैजा जैसी बीमारियों के इलाज, मरीजों की देखभाल और इन रोगों की रोकथाम के लिये आवश्यक प्रशिक्षण दिया गया। यूनेस्को, विश्व स्वास्थ्य संगठन, रॉकफेलर फाउंडेशन जैसी संस्थाओं के जरिये इन बीमारियों से निपटने के लिये दवाएं और टीके उपलब्ध कराये जाते थे। उस दौर में अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं की मदद से ही इन कार्यक्रमों का संचालन किया जाता था। हालांकि, सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवा व्यवस्था में ज्यादा अंतर नहीं आया था और शहरी क्षेत्र ही तीन चौथाई से अधिक संसाधनों का उपयोग कर रहे थे। ग्रामीण क्षेत्रों में व्यवस्थाएं सामुदायिक विकास कार्यक्रम (Community Development Programme: CDP) के तहत संचालित की जाती थीं, जिनका लक्ष्य कृषि समेत कई अन्य कार्य भी थे। सीडीपी के तहत हर ब्लॉक में एक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र था, जिसके अधीन एक द्वितीयक स्वास्थ्य इकाई भी रहती थी। इन स्वास्थ्य संगठनों का उद्देश्य न सिर्फ स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध कराना था, बल्कि जल वितरण, सफाई, मानव एवं पशुजनित कचरे का निस्तारण, मलेरिया, चेचक जैसी महामारियों की रोकथाम और सफाई तथा पोषण को लेकर स्वास्थ्य जागरूकता भी था।

- **तीसरी पंचवर्षीय योजना का काल 1961 से 1966** तक रहा। मुदालियर कमेटी का गठन प्रारंभिक दो पंचवर्षीय योजनाओं में स्वास्थ्य क्षेत्र में हुये विकास के मूल्यांकन के लिये किया गया था। समिति की रिपोर्ट में स्पष्ट हुआ कि ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाओं के विकास में खासा अंतर था। शहरी क्षेत्र सीडीपी कार्यक्रम में शामिल नहीं थे और वहीं स्वास्थ्य सुविधाओं का तेजी से विकास हुआ। रिपोर्ट ने बताया कि 1961 के अंत तक देशभर में सिर्फ 2800 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र थे। तीसरी पंचवर्षीय योजना की शुरुआत तक देश में 1,40,000 आबादी के लिये सिर्फ एक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र था, जो बोहरे कमेटी की सिफारिश (हर दस हजार आबादी के लिये एक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र) के मुकाबले नगण्य था। ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में स्वास्थ्य सुविधाओं के भारी अंतर का अंदाजा इससे ही लगाया जा सकता है कि शहरों में प्रति 440 आबादी के लिये अस्पतालों में एक बेड उपलब्ध था, लेकिन गांवों में 7000 लोगों के लिये मात्र एक बेड था। इस पंचवर्षीय योजना का मुख्य उद्देश्य प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों की संख्या में वृद्धि और मौजूदा प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों में स्टाफ की कमी को दूर करना था। नये मेडिकल कॉलेजों की स्थापना, अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान यानी एम्स की स्थापना, संरक्षण, सामाजिक उपचार और मनोवैज्ञानिक चिकित्सा से जुड़े विभिन्न विभागों की स्थापना जैसे काम भी इसी पंचवर्षीय योजना के तहत किये गये। प्रारंभिक दो पंचवर्षीय योजनाओं में महामारियों पर रोकथाम, मृत्यु दर में गिरावट, जन्मदर में बढ़ोतरी के लक्ष्यों की दिशा में बेहतर परिणाम हासिल करने के बाद तीसरी योजना में जनसंख्या दर पर नियंत्रण का लक्ष्य तय किया गया। इस अवधि में सरकारी संस्थाओं को जनसंख्या नियंत्रण की दिशा में काम करने के लिये प्रेरित किया गया। इस लिहाज से स्वास्थ्य मंत्रालय के अधीन अलग से परिवार नियोजन कार्यक्रम संचालित किया गया, जिसके लिये अलग

विभाग का गठन भी किया गया। योजना में डॉक्टरों की कमी को दूर करने के लिये प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों में पांच साल से कार्यरत स्वास्थ्य सहायकों के लिये विशेष कोर्स की भी शुरुआत का प्रस्ताव रखा गया, जिसे पूरा करने के बाद स्वास्थ्य सहायक डॉक्टर बन सकते थे। लेकिन डॉक्टरों और चिकित्सा परिषद के विरोध के चलते इस प्रस्ताव पर काम नहीं किया जा सका।

- **चौथी पंचवर्षीय योजना (1969–1974)** दो साल के अंतराल के बाद प्रारंभ हुयी थी। इस योजना में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों को सशक्त बनाने पर ध्यान दिया गया, क्योंकि प्रारंभ में रोकथाम की दिशा में रोकथाम के बेहतर परिणाम के बावजूद मलेरिया ने एक बार फिर हमला किया था, जिसने पुराने मामलों से कहीं अधिक जान ली थीं। ऐसे में इस पंचवर्षीय योजना में संरक्षात्मक स्वास्थ्य सेवाओं को महत्व दिया गया, जिनका लक्ष्य मलेरिया, टीबी, कुष्ठ, रोहुआ (Trachoma), चेचक पर नियंत्रण था। विकास की राह में जनसंख्या की बाधा के बिन्दु को ध्यान में रखते हुये परिवार नियोजन इस योजना की प्राथमिकताओं में सबसे ऊपर था और कुल स्वास्थ्य बजट का 42 प्रतिशत हिस्सा सिर्फ इसके लिये ही रखा गया था। इस पंचवर्षीय योजना में जल वितरण और सफाई संबंधी विभागों को स्वास्थ्य से अलग कर आवास और क्षेत्रीय विकास सेक्टर में शामिल किया गया।
- **1974 से 1979 तक पांचवीं पंचवर्षीय योजना** का काल रहा। इस समय तक शिशु मृत्युदर में खासी गिरावट आ गयी थी, लेकिन ग्रामीण क्षेत्रों में अब भी शहरी क्षेत्रों के मुकाबले स्वास्थ्य सेवाओं और सुविधाओं का अभाव था। इस बिन्दु को ध्यान में रखते हुये इस योजना में न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम (Minimum Needs Programme: MNP) प्रारंभ किया गया, जिसका उद्देश्य ग्रामीण स्वास्थ्य ढांचे की कमियों को दूर करना था। परिवार नियोजन में पोषण और शिशु प्रतिरक्षण (Immunization) को शामिल किया गया। करतार सिंह कमेटी के सुझाव के अनुरूप बहुद्देश्यीय कार्यकर्ता योजना 1971 में प्रारंभ की गयी, जिसके तहत मौजूदा स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं को विभिन्न आनुषंगी कार्यों जैसे मलेरिया उन्मूलन कार्यक्रम, से जोड़ा गया। इसके लिये उन्हें स्वास्थ्य संबंधी विभिन्न कार्यक्रमों का प्रशिक्षण दिया गया। ग्रामीण क्षेत्रों में प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं से कई कार्यक्रम जोड़े गये।

  सामुदायिक स्वास्थ्य मार्गदर्शन योजना 1977 में प्रारंभ की गयी, जिसके तहत गांवों में चयनित कुछ लोगों को तीन माह का प्रशिक्षण दिया गया, जिसमें एलोपैथी और पारंपरिक चिकित्सा दोनों की जानकारी दी जाती थी और ये बहुद्देश्यीय कार्यकर्ता के तौर पर काम करते थे। श्रीवास्तव कमेटी का गठन भी इसी दौर में हुआ था, जिसने पाया कि विभिन्न सामाजिक–आर्थिक कारणों से डॉक्टर ग्रामीण क्षेत्रों में नहीं जा रहे थे, इस समस्या के निस्तारण के लिये कमेटी ने 'जनता का स्वास्थ्य, जनता के हाथ' योजना का सुझाव दिया यानी समाज के बीच से ही स्वास्थ्य कार्यकर्ता तलाशे जायें। पांचवीं पंचवर्षीय योजना की अवधि में ही देश में आपातकाल लागू हो गया था, इस दौरान जनसंख्या नियंत्रण के नाम पर बलपूर्वक पुरुष नसबंदी (Vasectomy) अभियान चलाया गया। इस अभियान का तीखा विरोध हुआ और नसबंदी ऑपरेशन के दौरान कई मौत के मामले भी सामने आये। इस दौरान राष्ट्रीय जनसंख्या नीति की घोषणा भी की गयी, लेकिन आपातकाल समाप्त होने के बाद नयी सरकार के गठन के बाद इसे लागू नहीं किया गया।
- **1980 से 1985 तक संचालित छठी पंचवर्षीय योजना** का मुख्य फोकस अवस्थापना विकास पर रहा। 1978 की अल्मा अता घोषणा (अल्मा अता कजाकस्तान का शहर है, जिसे अब अल्माती नाम से

जाना जाता है) ने इस पंचवर्षीय योजना में स्वास्थ्य नियोजन को निर्णयात्मक दिशा दी। इसका कारण यह था कि भारत भी सार्वजनिक स्वास्थ्य के मुद्दे पर आयोजित उस अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन में शामिल हुआ था, जो अल्मा अता में छह से 12 सितंबर 1978 तक आयोजित किया गया। यह पहली अंतर्राष्ट्रीय घोषणा थी, जिसमें हर व्यक्ति को प्राथमिक स्वास्थ्य देने की जरूरत पर जोर दिया गया। इसका ध्येय वाक्य था 'सबके लिये स्वास्थ्य' और यह लक्ष्य वर्ष 2000 तक हासिल किया जाना था। इस प्रक्रिया में विकासशील देशों पर अधिक जोर दिया गया। विश्व स्वास्थ्य संगठन, यूनिसेफ, सभी अंतर्राष्ट्रीय संगठन, सभी देशों की सरकारें, सभी स्वास्थ्य कर्मी और कार्यकर्ता, सबसे यह अपील की गयी कि वे अभियान को वित्तीय और तकनीकी समर्थन प्रदान कर इसे सफल बनायें। सार्वजनिक स्वास्थ्य कार्यक्रमों की दिशा में इसे मील का पत्थर माना जाता है। इस घोषणा को ध्यान में रखते हुये ही भारत ने वर्ष 1983 में पहली स्वास्थ्य नीति तैयार की, जिसमें समाज के हर वर्ग को प्राथमिक चिकित्सा सुविधा उपलब्ध कराने का लक्ष्य तय किया गया। इस दौरान यह पहलू भी उभरकर सामने आया कि शहरी क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाओं का तेज गति से विकास–विस्तार हुआ है और इन क्षेत्रों में समाज का हर वर्ग इन सुविधाओं का लाभ ले रहा था। ग्रामीण क्षेत्रों में अब भी स्वास्थ्य सेवाओं–सुविधाओं का अभाव बना हुआ था। ऐसे में ग्रामीण क्षेत्रों में सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यक्रम को बढ़ावा देने की वकालत की गयी। इस नीति में क्षैतिज और उर्ध्वाधर, यानी दोनों दिशाओं में अंतर्संबंधित कार्यक्रमों जैसे जल वितरण, पर्यावरण, स्वच्छता, हाईजीन, पोषण, शिक्षा, परिवार नियोजन आदि पर भी पूरा ध्यान दिया गया।

- **सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985–1990)** में विकेन्द्रीकरण और स्वास्थ्य नियोजन में जनसहभागिता को बढ़ावा देने पर ध्यान दिया गया। स्वास्थ्य नियोजन प्रक्रिया में पंचायतीराज संस्थानों की भूमिका को अहम माना गया। इस योजना में राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति के सुझावों को मंजूर किया गया। इस योजना में क्षेत्रीय वितरण के दौरान विशेषज्ञता और अतिविशेषज्ञता का समर्थन किया गया।
- **1992 से 1997 तक संचालित आठवीं पंचवर्षीय योजना** का दौर वैश्वीकरण का दौर था। इसी दौरान ढांचागत व्यवस्थाओं पर खास जोर दिया गया, जिसके लिये ढांचागत व्यवस्था कार्यक्रम संचालित हुआ। आर्थिक संकट से निपटने के लिये सरकार की ओर से संचालित किये जाने वाले अस्पताल को सार्वजनिक निजी भागीदारी (Public Private Partnership: PPP) पर दे दिया गया। स्वास्थ्य और शिक्षा के क्षेत्र में निजी कंपनियों को बढ़ावा देने के लिये विशेष कर छूट के भी प्रावधान किये गये। लेकिन, इसके चलते उपचार का मूल्य बढ़ता चला गया और बेहतर स्वास्थ्य सुविधाएं हासिल कर पाना बड़ी आबादी की पहुंच से दूर हो गया।
- **1997 से 2002 तक नवीं पंचवर्षीय योजना** रही। इस योजना में कुछ नवोन्मेषी सुझावों पर काम किया गया। इस योजना में बोहरे कमेटी की रिपोर्ट के कुछ बिन्दुओं से सन्दर्भ लिये गये और प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों इनके सहयोगी उपकेन्द्रों की स्थापना पर जोर दिया गया। इस योजना के दौरान राज्यों में विशेष रणनीतियों पर जोर दिया गया। इसी अवधि में राष्ट्रीय जनसंख्या नीति 2000 और राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति 2002 जारी की गयीं। इसके साथ ही सार्वजनिक स्वास्थ्य के क्षेत्र में सरकार और निजी सेक्टर की सीमाएं भी तय की गयीं। निर्धारित किया गया कि प्राथमिक स्वास्थ्य सरकार की जिम्मेदारी है। शहरी क्षेत्रों में बस्तियों में रहने वाले लोगों के प्राथमिक स्वास्थ्य के मसले पर भी इस योजना में ध्यान केन्द्रित किया गया।

- **दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002 से 2007)** में स्वास्थ्य सेवाओं–सुविधाओं की गुणवत्ता में सुधार पर जोर दिया गया। इस योजना में भी लक्षित क्षेत्र ग्रामीण क्षेत्र ही था, जहां बेहतर स्वास्थ्य सेवा उपलब्ध कराना और अधिक से अधिक ग्रामीण आबादी तक इनकी पहुंच बढ़ाना मकसद रहा। इस लक्ष्य को हासिल करने के लिये वर्ष 2007 में राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन (National Rural Health Mission: NRHM) लांच किया गया। इसके बाद वर्ष 2012 से 2017 की 12वीं पंचवर्षीय योजना में राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति 2017 जारी की गयी।

4.5: भारत में स्वास्थ्य नीतियां (Health Policies in India)

भारत में बेहतर स्वास्थ्य सुविधाओं और सेवाओं के विस्तार, अस्पतालों–मेडिकल कॉलेजों की स्थापना, चिकित्सकों और अन्य स्वास्थ्यकर्मियों की कमी दूर करने समेत विभिन्न स्वास्थ्य संबंधी मुद्दों को लेकर निम्न नीतियां और अभियान संचालित किये गयेः

राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति 1983 (National Health Policy 1983)

भारत की पहली राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति वर्ष 1983 में लागू हुयी, इसे अल्मा अता घोषणा के बाद जारी किया गया था, जिसका मकसद वर्ष 2000 तक बेहतर स्वास्थ्य लक्ष्यों को हासिल करना था। इसका लक्ष्य समुदाय की प्राथमिकताओं और वास्तविक जरूरतों के अनुरूप सार्वजनिक, व्यापक प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध कराना था, जो बेहद कम लागत पर जनता के लिये उपलब्ध हो। इस नीति में जनसंख्या के आधार पर सुझाव दिये गये थे। इस नीति में शामिल कुछ अहम बिन्दु निम्नवत रहेः

- इस नीति में संरक्षात्मक, प्रोत्साहनात्मक और पुनर्वासात्मक प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं–सुविधाओं के बढ़ावे पर जोर दिया गया
- नीति में देशभर में व्यापक प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा नेटवर्क की स्थापना के लिये समयबद्ध और चरणबद्ध कार्यक्रम चलाये जाने की जरूरत जतायी गयी
- नीति में पर्याप्त जानकारी और कौशल रखने वाले स्वयंसेवियों और स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं (गैर व्यवसायीकरण) की मदद से स्वास्थ्य सेवाओं के विकेन्द्रीकृत करने का सुझाव दिया गया
- स्वास्थ्य शिक्षा को बढ़ावा दिया जाना चाहिये, ताकि प्राथमिक स्तर की स्वास्थ्य समस्याओं को लोग अपने स्तर पर ही सुलझा सकें
- विशिष्ट और अति विशिष्ट सुविधाओं के लिये निजी सेक्टर के स्वास्थ्य केन्द्रों के नेटवर्क को बढ़ाया जाना चाहिये, ताकि सरकार का बोझ कुछ कम हो सके
- देशभर में महामारी से संबंधित क्षेत्रों की पहचान और उन इलाकों में विभिन्न स्वास्थ्य सेवाओं की एकीकृत व्यवस्था को बढ़ावा दिया जाना चाहिये
- उच्चीकृत स्वास्थ्य केन्द्रों पर मरीजों का भार कम करने के लिये रेफरल व्यवस्था प्रारंभ की गयी, ताकि छोटी बीमारियों, स्वास्थ्य समस्याओं का इलाज विकेन्द्रीकृत केन्द्रों पर हो सके

हालांकि, यह माना गया था कि यह नीति सबको, विशेष रूप से निर्धन और उपेक्षित समूहों को बेहतर स्वास्थ्य सुविधाएं मिलेंगी, लेकिन वर्ष 2000 तक यह स्पष्ट हुआ कि वित्तीय संसाधनों और स्वास्थ्य प्रशासन

के अभाव में यह लक्ष्य हासिल नहीं किया जा सका। विकेन्द्रीकरण और गैर विशेषज्ञीकरण ने कुछ हद तक काम किया, लेकिन सामुदायिक सहभागिता बढ़ाने की दिशा में बेहतर परिणाम नहीं मिल सके। ग्रामीण प्राथमिक स्वास्थ्य व्यवस्था में अपेक्षित सुधार नहीं आ सका और इन क्षेत्रों के लोगों को बेहतर इलाज के लिये निजी चिकित्सकों के पास या फिर शहरी क्षेत्रों के प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों पर जाना पड़ता था। इस नीति का परिणाम संतोषजनक नहीं रहा और विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में तय किये गये लक्ष्य पूरे नहीं किये जा सके। इसके अलावा इस नीति ने उपचारात्मक स्वास्थ्य व्यवस्था के निजीकरण को भी प्रोत्साहित किया।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति 2002 (National Health policy 2002)

इस नीति में व्यवस्था की व्यावहारिकता और पहुंच में सुधार पर ध्यान केन्द्रित किया गया। इसके लिये निजी और सार्वजनिक चिकित्सालयों में समन्वय, सहयोग पर जोर दिया गया, ताकि देश की जरूरत के हिसाब से बेहतर स्वास्थ्य सेवाएं मुहैया करायी जा सकें। नीति में मौजूदा संस्थानों में नये अवस्थापना विकास पर जोर दिया गया ताकि विकेन्द्रीकृत सार्वजनिक स्वास्थ्य व्यवस्था को बढ़ावा दिया जा सके। प्राथमिक स्वास्थ्य स्तर पर ही संरक्षण और उपचारात्मक सुविधाएं उपलब्ध कराना नीति की प्राथमिकता रही। नीति में निजी चिकित्सा सुविधा के योगदान पर भी ध्यान दिया गया। इसमें जेनेरिक दवाओं और टीकों की उपलब्धता पर जोर दिया गया, ताकि सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवा को और प्रभावी व सस्ता बनाया जा सके। नीति में दवाओं के पारंपरिक और सिद्ध, यानी जिनका परीक्षण किया जा चुका हो, तरीकों के उपयोग को भी प्रोत्साहित किया गया।

क्षय रोग, मलेरिया, अंधता और एड्स वो बीमारियां थीं, जिन पर इस नीति में विशेष ध्यान दिया गया। इस नीति में समयबद्ध तरीके से विभिन्न लक्ष्य तय किये गये थे, जिन्हें हम निम्न सारिणी से आसानी से समझ सकेंगे।

पेलियो और याज (त्वचा पर गांठ होना) रोग का उन्मूलन	2005
कुष्ठरोग उन्मूलन	2005
कालाजार का उन्मूलन	2010
एचआईवी–एड्स की बढ़ोतरी दर को शून्य करना	2007
क्षयरोग, मलेरिया और अन्य जलजनित व संक्रामक रोगों के कारण मृत्यु दर को 50 प्रतिशत तक कम करना	2010
अंधता के प्रसार पर रोकथाम कर इसे 0.5 प्रतिशत से भी कम पर लाना	2010
शिशु मृत्यु दर को 30/1000 और मातृ मृत्युदर को 100/ एक लाख तक घटाना	2010
सकल घरेलू उत्पाद में स्वास्थ्य पर खर्च को मौजूदा 0.9 प्रतिशत से बढ़ाकर दो प्रतिशत करना	2010
कुल स्वास्थ्य खर्च में केन्द्रीय अनुदान को कम से कम 25 प्रतिशत तक बढ़ाना	2010
राज्य सेक्टर में बजट में स्वास्थ्य खर्चे को 5.5 प्रतिशत से बढ़ाकर सात फीसदी करना	2005

राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन (National Rural Health Mission 2005)

यह मिशन यूपीए सरकार के कार्यकाल में न्यूनतम साझा कार्यक्रम के तहत प्रारंभ किया गया था। इसका लक्ष्य ग्रामीण क्षेत्रों की आबादी को बेहतर स्वास्थ्य सेवाएं मुहैया कराना था, जिसके अंतर्गत समान, सस्ती और गुणवत्तायुक्त सेवाएं उपलब्ध करायी जानी थीं। अभियान में उन 18 राज्यों को वरीयता दी गयी, जहां स्वास्थ्य सूचकांक या अवस्थापना विकास बेहद कमजोर था। पहली बार स्वास्थ्य को विकास का घटक माना गया था, यही वजह थी कि इस मिशन में सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवा–सुविधाओं पर होने वाला खर्चा भी बढ़ा दिया गया था। टीकाकरण, क्षयरोग नियंत्रण, कुष्ठरोग उन्मूलन, कैंसर नियंत्रण आदि कई कार्यक्रम इस एक मिशन के तहत एकीकृत किये गये। स्वच्छता, पोषण, साफ पेयजल जैसे बेहतर स्वास्थ्य के बुनियादी कारकों को भी इसके जरिये स्वास्थ्य नियोजन में शामिल किया गया। ग्राम स्तर तक पहुंच बढ़ाने के लिये पंचायती राज संस्थाओं को भी स्वास्थ्य कार्यक्रमों से जोड़ा गया। पंचायतों, स्वयंसेवी संस्थाओं और अन्य राष्ट्रीय, राज्यस्तरीय व जिलास्तरीय हितधारकों के जरिये जनसहभागिता को बढ़ाने पर जोर दिया गया। महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता 'आशा' तैयार की गयीं, जिनका मकसद ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाओं के अंतर को पाटना और हर घर की स्वास्थ्य सुविधाओं, योजनाओं तक पहुंच बढ़ाना था। आयुर्वेद, यूनानी, सिद्ध, होम्योपैथ, योग जैसे वैकल्पिक उपचारात्मक साधनों को भी मिशन में शामिल किया गया। इस कार्यक्रम के तहत स्वास्थ्य पर होने वाले खर्च को सकल घरेलू उत्पाद का दो से तीन फीसदी करने का प्रस्ताव दिया गया, जो उस वक्त तक 0.9 फीसदी था। सार्वजनिक निजी साझेदारी मिशन का अहम साधन रहा। इसी दौरान जननी सुरक्षा योजना, जननी शिशु सुरक्षा कार्यक्रम भी प्रारंभ किये गये, जिनका लक्ष्य शिशु और मातृ मृत्यु दर में गिरावट लाना था।

राष्ट्रीय शहरी स्वास्थ्य मिशन (National Urban Health Mission 2014)

इस अभियान का लक्ष्य शहरी निर्धन वर्ग, विशेषकर बस्तियों में रहने वाले लोग और उपेक्षित वर्गों (जैसे कुली, ठेलीवाले, रिक्शाचालक आदि) की प्राथमिक स्वास्थ्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये काम करना था। इस अभियान के तहत एक लाख या इससे अधिक आबादी वाले देश के सभी शहरों को शामिल किया गया। बाद में एनआरएचएम और एनयूएचएम, इन दोनों अभियानों को एकीकृत कर राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन (National Health Mission) नाम दिया गया।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति (National Health Policy 2017)

पिछली स्वास्थ्य नीति के बाद से अब तक आये सामाजिक–आर्थिक परिवर्तनों और महामारियों की स्थिति के कारण उभरती चुनौतियों को ध्यान में रखते हुये वर्ष 2017 में यह नीति प्रारंभ हुयी। इस नीति के केन्द्र में निर्धनता को बढ़ावा देने की वजह बनने वाले बीमारियों के कारण भारी भरकम खर्च को कम करना, मजबूत स्वास्थ्य सेवा उद्यम को बढ़ाना और आर्थिक विकास को बढ़ाना था, ताकि राजकोषीय क्षमता को और बढ़ाया जा सके। यह नीति 15 मार्च 2017 को मंजूर हुयी। इस नीति के बुनियादी सिद्धान्तों में कुशलता–विशेषज्ञता, एकीककरण और मूल्य, समानता, सामर्थ्य, सार्वजनिक, रोगी केन्द्रित एवं गुणवत्तापरक देखभाल, विश्वसनीयता एवं बहुलवाद शामिल हैं। इस नीति में समयबद्ध तरीके से वर्ष 2025 तक सार्वजनिक स्वास्थ्य

के क्षेत्र में कुल सकल घरेलू उत्पाद का ढाई प्रतिशत खर्च करने और प्रदेशों में वर्ष 2020 तक कुल राज्य बजट का आठ प्रतिशत खर्च करने का प्रस्ताव रखा गया है। स्वास्थ्य बजट का भी दो तिहाई व्यय प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं पर करने का प्रस्ताव है। नीति के अनुसार प्राथमिक स्वास्थ्य सेवआओं में वृद्ध स्वास्थ्य सेवा (Geriatric Healthcare), उपशामक या शांति देने वाली औषधीय स्वास्थ्य सेवा (Palliative Healthcare) और पुनर्वास स्वास्थ्य सेवाएं (Rehabiliative Healthcare) शामिल हैं, जिनके लिये स्वास्थ्य और कल्याण केन्द्रों की मदद ली जानी है। नीति में सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाएं उपलब कराने और सबको कम खर्चे पर गुणवत्तापरक स्वास्थ्य सुविधाएं देने पर जोर दिया गया है।

नीति में कई ऐसे सुझाव भी दिये गये हैं, जिनके जरिये वर्ष 2025 तक स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं के कारण होने वाले गैरजरूरी खर्चों और इसके परिणामस्वरूप सामने आने वाली निर्धनता को वर्तमान से 25 प्रतिशत तक कम किया जा सके। नीति का उद्देश्य प्रजनन, शिशु, किशोर स्वास्थ्य, संक्रामक, गैर–संक्रामक व उपजीविकाजन्य रोगों के निदान के लिये समन्वित और व्यापक प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाएं मुहैया कराने का है। इस नीति में सार्वजनिक अस्पतालों में निःशुल्क दवाएं, निःशुल्क जांच और निःशुल्क आपातकालीन सुविधाएं प्रदान करने का प्रस्ताव है। नीति में यह भी जोर दिया गया है कि जिला स्तरीय सार्वजनिक अस्पतालों में ही द्वितीय स्तर की सभी स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध होनी चाहिये। आयुष सेवाओं (आयुर्वेद, यूनानी, होम्योपैथी, सिद्ध और योग) को राष्ट्रीय आयुष मिशन (NAM) के जरिये मुख्यधारा में लाना भी इस नीति का एक अहम बिन्दु है। डॉक्टरों और विशेषज्ञ चिकित्सकों की कमी से जूझने के लिये नीति में मौजूदा मेडिकल कॉलेजों को मजबूत करने और सभी जिला अस्पतालों को नये मेडिकल कॉलेजों में बदलने का सुझाव दिया गया है। आशा कार्यकत्रियों को एएनएम, नर्स या पैरामेडिकल कोर्स करने योग्य बनाने पर भी जोर दिया गया है।

संरक्षणात्मक स्वास्थ्य को देखते हुये नीति में ऐसे सात क्षेत्रों की पहचान की गयी है, जहां सुधार की जरूरत महसूस हुयी है। इनमें स्वच्छता के लिये स्वच्छ भारत अभियान, संतुलित–पोषक भोजन और नियमित व्यायाम, तंबाकू से हानि पर जागरूकता, शराब और मादक द्रव्यों का सेवन, यात्री सुरक्षा (हादसों में होन वाली मौतों में कमी लाने के लिये), निर्भया नारी (लैंगिक हिंसा में कमी लाना), कार्यस्थल पर तनाव में कमी व सुरक्षा में वृद्धि तथा घर के बाहर व भीतर प्रदूषण में कमी लाना शामिल हैं। नीति में तय किये गये कुछ लक्ष्य निम्नवत हैंः

- वर्ष 2025 तक औसत आयु 67.5 वर्ष से बढ़ाकर 70 वर्ष करना
- पांच वर्ष से कम आयु के शिशुओं की मृत्यु तक को वर्ष 2025 तक 23 करना और मातृ मृत्युदर को 2020 तक 100 पर लाना
- शिशु मृत्युदर को वर्ष 2019 तक 28 पर लाना
- एचआईवी–एड्स के सन्दर्भ में वर्ष 2020 तक वैश्विक लक्ष्य हासिल करना, जिसे 90:90:90 नाम दिया गया है, इसका अर्थ यह है कि एचआईवी संक्रमित 90 प्रतिशत लोगों को अपनी स्थिति की जानकारी हो, एचआईवी संक्रमित होने की जानकारी रखने वाले 90 प्रतिशत लोगों को लगातार एंटीरेट्रोवायरल थेरेपी उपलब्ध हो और थेरेपी ले रहे 90 प्रतिशत लोग वायरस के दमन में सक्षम हो सकें

- वर्ष 2025 तक कैंसर, हृदयरोग, मधुमेह और श्वास रोगों के कारण होने वाली असमय मौतों को घटाकर 25 प्रतिशत तक लाना
- सार्वजनिक स्वास्थ्य सुविधाओं के स्तर और उपयोग में वर्ष 2025 तक मौजूदा स्तर से 50 प्रतिशत तक बढ़ोतरी
- वर्ष 2025 तक ऐसी व्यवस्था करना कि 90 प्रतिशत नवजात एक साल की आयु तक प्रतिरक्षण (Immunization) के दायरे में आ जायें
- वर्ष 2025 तक परिवार नियोजन के निर्धारित लक्ष्य को 90 प्रतिशत तक हासिल करना
- वर्ष 2025 तक उच्च रक्तचाप और मधुमेह पीड़ित 80 प्रतिशत लोगों की बीमारी को नियंत्रण की स्थिति में लाना
- तंबाकू के मौजूदा उपयोग को वर्ष 2020 तक 15 प्रतिशत और 2025 तक 30 प्रतिशत तक घटाना
- स्वच्छ भारत मिशन के तहत वर्ष 2020 तक सबके लिये साफ पानी और सफाई की व्यवस्था
- वर्ष 2020 तक उच्च प्राथमिकता वाले सभी जिलों में भारतीय सार्वजनिक स्वास्थ्य मानक के अनुरूप डॉक्टरों और पैरामेडिकल स्टाफ की उपलब्धता सुनिश्चित करना
- वर्ष 2025 तक सभी उच्च प्राथमिकता वाले जिलों (जनसंख्या अथवा अन्य तात्कालिक मानकों के अनुरूप) में प्राथमिक एवं द्वितीयक स्वास्थ्य उपचार सुविधाएं उपलब्ध कराना

4.6: भारत में स्वास्थ्य कार्यक्रम (Health Programmes in India)

हम पहले ही जान चुके हैं कि राष्ट्रीय स्तर पर संक्रामक और अन्य रोगों के कारण मृत्यु दर में गिरावट के मकसद से कई कार्यक्रमों को लागू किया गया है। भारत में इन कार्यक्रमों को सफलतापूर्वक संचालित किया गया और इनके काफी हद तक अपेक्षित परिणाम भी मिले, लेकिन परिस्थितियों और आवश्यकताओं के अनुरूप समय–समय पर इन कार्यक्रमों में कई बदलाव भी किये जाते रहे। वर्तमान में संचालित कुछ राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रमों में राष्ट्रीय संक्रामक रोग नियंत्रण कार्यक्रम, राष्ट्रीय क्षयरोग नियंत्रण कार्यक्रम, राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रम, राष्ट्रीय कुष्ठरोग उन्मूलन कार्यक्रम आदि शामिल हैं।

- राष्ट्रीय संक्रामक रोग नियंत्रण कार्यक्रम को वर्ष 2003–04 में केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय द्वारा प्रारंभ किया गया था, जिसकी देखरेख राष्ट्रीय वेक्टरजनित रोग नियंत्रण कार्यक्रम निदेशालय बतौर नोडल एजेंसी करता है। इस कार्यक्रम के तहत ऐसी बीमारियों की रोकथाम का लक्ष्य निर्धारित है, जो रोगाणुओं के कारण फैलती हैं। इनमें मलेरिया, कालाजार, हाथीपांव, जापानी बी इन्सेफ्टिलाइटिस, डेंगू आदि शामिल हैं।
- मातृ एवं शिशु मृत्युदर में गिरावट के लिये पहली पंचवर्षीय योजना से ही कुछ कार्यक्रम प्रारंभ किये गये थे। प्रारंभिक कार्यक्रमों में ही जरूरतों के हिसाब से समय–समय पर बदलाव और उच्चीकरण किये जाते रहे। वर्तमान में ऐसे दो कार्यक्रम स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय के अधीन चल रहे हैं, जिनके नाम जननी सुरक्षा योजना एवं जननी शिशु सुरक्षा कार्यक्रम हैं। जननी सुरक्षा योजना के तहत गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाली यानी बीपीएल श्रेणी में आने वाली सभी गर्भवती महिलाओं को कवर किया जा रहा है। इन महिलाओं का प्रसव सरकारी अथवा निर्धारित

निजी अस्पताल में करने को प्रोत्साहन देने के लिये इन गर्भवती महिलाओं को आर्थिक मदद दी जाती है। योजना के तहत उन आशा कार्यकत्रियों के लिये भी प्रोत्साहन की व्यवस्था है, जो इन गर्भवती महिलाओं को सांस्थानिक प्रसव के लिये तैयार करती हैं। जननी शिशु सुरक्षा कार्यक्रम के तहत सार्वजनिक अस्पतालों में प्रसव करने वाली सभी महिलाओं को नॉर्मल अथवा सीजेरियन डिलीवरी की सुविधा निःशुल्क प्रदान की जाती है। इसके अलावा प्रसव के बाद अस्पताल में ठहरने और दवाओं का भी कोई खर्चा नहीं लिया जाता है। जन्म के बाद तीस दिन तक शिशु के निःशुल्क उपचार का भी प्रावधान है।

- टीकाकरण से वंचित रह गये अथवा उन बच्चों तक पहुंचने के लिये, जिनका आधा–अधूरा टीकाकरण हुआ है, दिसंबर 2014 में मिशन इंद्रधनुष प्रारंभ हुआ। कार्यक्रम के तहत देशभर में उच्च प्राथमिकता वाले जिलों में विभिन्न चरणों में टीकाकरण कार्यक्रम संचालित किये जा रहे हैं।
- व्यवसायजनित रोगों के उपचार एवं नियंत्रण के लिये राष्ट्रीय कार्यक्रम वर्ष 1998–99 में प्रारंभ हुआ। इसके तहत कार्यस्थल पर मौजूद परिस्थितियों के कारण सिलिकोसिस, एस्बेस्टोसिस, अस्थमा जैसी बीमारियों की चपेट में आने वाले लोगों पर ध्यान केन्द्रित किया गया है। बोहरे कमेटी ने अपनी रिपोर्ट में कार्यस्थल पर कामगारों की सुरक्षा को सर्वाधिक प्राथमिकता दी थी, राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति 1983 और फिर 2002 में भी इसे महत्वपूर्ण घटक माना गया है।
- मानसिक अक्षमता से जुड़े रोगों के लिये भी सामाजिक न्याय एवं सशक्तीकरण मंत्रालय के अधीन कई कार्यक्रम एवं योजनाएं संचालित की जा रही हैं। इनमें दिशा, विकास, घरौंदा, निर्माया, प्रेरणा, संभव, सहयोगी और बढ़ते कदम आदि शामिल हैं।
- प्रधानमंत्री स्वास्थ्य सुरक्षा योजना, राष्ट्रीय तंबाकू नियंत्रण कार्यक्रम, बुजुर्गों के स्वास्थ्य के लिये राष्ट्रीय कार्यक्रम, राष्ट्रीय अंधता उन्मूलन कार्यक्रम, किशोर स्वास्थ्य कार्यक्रम, बाल स्वास्थ्य कार्यक्रम आदि उन कुछ कार्यक्रमों में शामिल हैं, जो केन्द्रीय सरकार की ओर से समाज के कल्याण के लिये संचालित किये जा रहे हैं।

आयुष्मान भारत (Ayushman Bharat)

आयुष्मान भारत योजना स्वास्थ्य सुरक्षा योजना है, जिसके तहत देश के सभी राज्यों और केन्द्रशासित प्रदेशों की अनुमानित दस करोड़ परिवारों (करीब 50 करोड़ आबादी, यानी देश की करीब 40 प्रतिशत जनसंख्या), जो विशेष तौर पर निर्धन और उपेक्षित वर्ग से जुड़े हुये हैं, को स्वास्थ्य बीमा देने की योजना है। योजना के तहत हर परिवार को प्रतिवर्ष सार्वजनिक अथवा निर्धारित निजी अस्पताल में उपचार के लिये पांच लाख रुपये का बीमा कवर दिया जाता है। केन्द्रीय स्तर पर आयुष्मान भारत राष्ट्रीय स्वास्थ्य सुरक्षा अभियान परिषद बनायी जायेगी, जिसके अध्यक्ष स्वास्थ्य मंत्री होंगे। यह परिषद राज्यों के साथ एक राज्यस्तरीय स्वास्थ्य एजेंसी के जरिये समन्वय करेगी। बीमित परिवारों को पेपरलेस, कैशलेस सुविधा इस योजना के तहत प्रदान की जानी है। विशेष बात यह है कि इस योजना के तहत परिवार के सदस्यों की संख्या की कोई बाध्यता नहीं है। इसी तरह की दो अन्य बीमा योजनाएं राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना और वरिष्ठ नागरिक स्वास्थ्य बीमा योजना भी हैं। ये दोनों योजनाएं भी आयुष्मान भारत योजना के अंतर्गत आयेंगी।

राष्ट्रीय आयुष मिशन (National AYUSH Mission)

आयुष मिशन सितंबर 2014 में 12वीं पंचवर्षीय योजना के तहत लागू हुआ। इस अभियान के जरिये सरकार ने वैकल्पिक उपचार एवं स्वास्थ्य व्यवस्थाओं को प्रोत्साहित, पुनर्जीवित करने का प्रयास किया है, ताकि वे समाज की स्वास्थ्य संबंधी जरूरतों को पूरा कर सकें। योजना के तहत आयुर्वेद, यूनानी, सिद्ध, योग, होम्योपैथी पद्धतियों को विस्तार दिया जाना है, जिसमें डिस्पेंसरियों का उच्चीकरण, अस्पतालों–डिस्पेंसरियों की व्यवस्था, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र और जिलास्तरीय अस्पताल बनाने की योजना है।

भारत में सार्वजनिक स्वास्थ्य सुविधा व्यवस्था (Public Healthcare System in India)

1. **प्रशासनिक ढांचा:** सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवा के क्षेत्र में प्रशासनिक ढांचे के तीन चरण या घटक हैं, केन्द्रीय स्तर, राज्य स्तर और स्थानीय स्तर। केन्द्रीय स्तर पर इसके घटक निम्नवत हैं:

- केन्द्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, इसमें भी दो भाग हैं– स्वास्थ्य विभाग और परिवार कल्याण विभाग
- स्वास्थ्य सेवाओं का महानिदेशालय
- केन्द्रीय स्वास्थ्य परिषद, जिसके अध्यक्ष केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्री हैं और राज्यों के स्वास्थ्य मंत्री इसके सदस्य हैं

इसी तरह राज्य स्तर पर इसके घटक निम्नवत हैं:

- राज्य स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय
- राज्य स्वास्थ्य निदेशालय, जिसके दो घटक हैं– चिकित्सा शिखा निदेशालय एवं स्वास्थ्य निदेशालय

जिला स्तर पर प्रशासन छह भागों में बंटा हुआ है:

- उपखंड या परगना
- तहसील
- विकासखंड
- नगर निकाय
- गांव
- पंचायत

2. **स्वास्थ्य सेवाप्रदाता ढांचा:** इसे हम तीन हिस्सों, प्राथमिक, द्वितीयक और प्रादेशिक स्तर पर बांट सकते हैं:

- प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाएं प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों यानी पीएचसी और उपकेन्द्रों के जरिये प्रदान की जाती हैं
- द्वितीय स्वास्थ्य सेवाएं सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों यानी सीएचसी और जिलास्तरीय अस्पतालों में मिलती हैं
- प्रादेशिक स्वास्थ्य सेवाएं क्षेत्रीय स्वास्थ्य केन्द्रों या केन्द्रीय स्तरीय संस्थानों में प्रदान की जाती हैं

4.7: निष्कर्ष (Conclusion)

उपलब्ध तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि पर्याप्त बजट के अभाव और लागू किये जाने में ढिलाई के चलते भारत में स्वास्थ्य सेवाओं की स्थिति इतनी बेहतर नहीं हो सकी कि वे गुणवत्तापरक हो सकें। इससे ग्रामीण क्षेत्रों, उपेक्षित और निर्धन वर्ग के लोगों को इनका बेहतर लाभ नहीं मिल सका। इस समस्या से निपटने के लिये आवश्यक सेवाओं को निजी हाथों में सौंपा जाने लगा है, लेकिन इस कदम से स्वास्थ्य और उपचार की सेवाएं निर्धन वर्ग के लोगों की पहुंच से दूर होती जा रही हैं। चूंकि, स्वास्थ्य विकास का एक अहम पैमाना है, जरूरत यह है कि भविष्य के लिये और अधिक बेहतर व व्यावहारिक नीतियों को तैयार किया जाये ताकि हर व्यक्ति तक बेहतर स्वास्थ्य सेवा उपब्लध कराना सुनिश्चित किया जा सके।

4.8: अभ्यास प्रश्न (Model Questions)

- बोहरे कमेटी का गठन कब और क्यों किया गया था? इस कमेटी के प्रमुख सुझावों पर प्रकाश डालें।
- किस कमेटी ने सामूहिक चिकित्सा का सुझाव दिया?
- सामाजिक चिकित्सक की अवधारणा क्या है?
- बहुद्देश्यीय स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं से आप क्या समझते हैं?
- भारत की पहली पंचवर्षीय योजना में किस कमेटी के सुझावों को शामिल किया गया था?
- भारत की पहली राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति को लागू करने के पीछे क्या वजहें रहीं?

4.9: सहायक अध्ययन (Suggested Readings)

- Baru. Rama and Bisht . (2010)Health service inequalities as challenge to health security, Oxfam India, New Delhi.
- Duggal Ravi (2001) , 'Evolution Of Health Policy In India'CEHAT, New Delhi.
- Praveen Jha(2003) 'Current Government Policies Towards Health,Education and Poverty Alleviation in India: An Evaluation', the Council for Social Development, New Delhi,

- Sujatha.V. 2014. '*Sociology of Health and Medicine, new perspectives*'. New Delhi: Oxford Univesity Press.

Website : www. Nhp.govt.in National health portal

इकाई -5

भारत में स्वास्थ्य प्रशासन (Healthcare Administration in India)

5.1 उद्देश्य
5.2 परिचय
5.3 भारत में स्वास्थ्य नीतियों का विकास
5.4 स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय का संगठन
5.5 भारत में सार्वजनिक स्वास्थ्य संस्थानों की भूमिका
5.6 स्वास्थ्य योजनाएं और कार्यक्रम
5.7 निष्कर्ष
5.8 भावी अध्ययन

5.1 उद्देश्य (Objects)

इस इकाई के अध्ययन के बाद हम जान सकेंगे कि–

- भारत में स्वास्थ्य देखभाल का संवैधानिक आधार, प्रमुखता एवं सुनिश्चितता
- भारत में स्वास्थ्य देखभाल नीतियों के विकास को कालक्रमानुसार समझना
- भारत में स्वास्थ्य देखभाल के मसले पर गठित विभिन्न कमेटियां
- स्वास्थ्य देखभाल प्रशासन में शासन की भूमिका
- स्वास्थ्य देखभाल के क्षेत्र में सार्वजनिक संस्थानों की उपलब्धता, भूमिका और कार्य
- भारत में स्वास्थ्य देखभाल संबंधी नीतियां और योजनाएं

5.2 परिचय (Introduction)

भारतीय संविधान ने स्वास्थ्य के अधिकार को मूलभूत अधिकारों में जगह दी है। प्रस्तावना और राज्य के नीति निर्देशक तत्वों में सार्वजनिक स्वास्थ्य के सन्दर्भ में प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से स्थान दिया गया है। सुप्रीम कोर्ट ने स्पष्ट किया है कि अनुच्छेद 21 (जीवन के अधिकार) के अंतर्गत भारत में स्वास्थ्य के अधिकार को बुनियादी अधिकार के रूप में विभिन्न प्रावधानों से संरक्षित किया गया है। नीति निर्देशक तत्वों के अलावा स्वास्थ्य संबंधी प्रावधानों को 11वीं और 12वीं अनुसूची में पंचायतों और नगर पालिकाओं के अधीन रखा गया है। इनमें पेयजल का अधिकार, स्वास्थ्य एवं स्वच्छता, परिवार कल्याण, महिला एवं बाल सशक्तीकरण, सामाजिक कल्याण आदि शामिल हैं। संविधान राज्य को लोगों की स्वास्थ्य देखभाल की स्थितियों में सुधार के कदम उठाने के लिये निर्देशित करता है। सार्वजनिक स्वास्थ्य एवं सफाई व्यवस्था, अस्पतालों और डिस्पेंसरियों को राज्य सूची में रखा गया है ऐसे में लोगों की स्वास्थ्य देखभाल के संबंध में राज्य प्रशासन की बड़ी जिम्मेदारी और भूमिका बन जाती है। प्रत्येक राज्य को इतना सशक्त बनाया गया है कि वह लोगों की बेहतरी के लिये अपने स्वयं के स्वास्थ्य कार्यक्रमों का संचालन कर सके और नीतियों का निर्माण कर सके। इसके अलावा संविधान में स्वास्थ्य को मूलभूत अधिकार के तौर पर स्थापित करने के लिये स्वास्थ्य को समन्वित बनाने की दिशा में भी कई अन्य पहल की गयी हैं। वर्ष 1989 में परमानंद कटारा बनाम भारतीय गणराज्य के मामले में सुप्रीम कोर्ट ने ऐतिहासिक निर्णय दिया। अपने इस फैसले में अदालत ने कहा कि यह डॉक्टर –चाहे निजी हो या सार्वजनिक अस्पताल में कार्यरत– का कर्तव्य है कि वह जीवन की सुरक्षा के लिये अपनी सेवाओं को विस्तार दे। कोर्ट ने कहा कि मानव जीवन का संरक्षण सर्वोच्च प्राथमिकता में होना चाहिये।

5.3 भारत में स्वास्थ्य नीतियों का विकास (Evolution of Healthcare policies in India)

औपनिवेशिक काल से ही भारत की तत्कालीन परिस्थितियों के मूल्यांकन और समीक्षा के लिये विभिन्न कमेटियों का गठन किया गया। इनका कार्य स्वास्थ्य हालात की जानकारी देना और नागरिको ंको बेहतर सुविधाएं मुहैया कराने के लिये आवश्यक सुझाव देना था। ऐसी कुछ प्रमुख समितियां निम्न हैं:

भोरे कमेटी, 1946

ब्रिटिशकाल में वर्ष 1943 में इस कमेटी का गठन किया गया था। इसका मकसद तत्कालीन स्वास्थ्य व्यवस्था का सर्वे करना था। कमेटी ने बताया कि भारत में संरक्षात्मक स्वास्थ्य के लिहाज से कार्यक्रमों का विकास करना आवश्यक है और भारत में स्वास्थ्य के इलाज की व्यवस्था के साथ स्वास्थ्य प्रशासन की व्यवस्था होनी चाहिये। कमेटी ने अपनी रिपोर्ट वर्ष 1946 में दी। कमेटी के कुछ प्रस्ताव निम्न हैं:

- कोई भी व्यक्ति चिकित्सा उपचार से इसलिये वंचित नहीं रहना चाहिये कि वह इलाज के दाम का भुगतान कर पाने में अक्षम है
- आधुनिक चिकित्सा अभ्यास की जटिलता को ध्यान में रखते हुये, यह आवश्यक है कि इनका विकास करते हुये समुचित परीक्षण और उपचार के लिये परामर्श, जांच, सांस्थानिक सुविधाएं अनिवार्य रूप से व्यवस्था की जाये
- स्वास्थ्य समस्या के उपचार के दौरान यह आवश्यक है कि संरक्षात्मक दृष्टि पर जोर दिया जाये
- देश की बड़ी ग्रामीण आबादी को चिकित्सकीय सुविधाएं और देखभाल प्रदान करना अत्यावश्यक है

- सामुदायिक स्तर पर अधिकतम सुविधा और सेवा प्रदान करने के लक्ष्य से यह आवश्यक है कि स्वास्थ्य सुविधाएं जनता के नजदीक उपलब्ध करायी जायें
- स्वास्थ्य कार्यक्रमों के विकास में जनता की सक्रिय सहभागिता को सुनिश्चित करना आवश्यक है
- प्रत्येक 20 हजार आबादी पर एक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, 60 हजार आबादी पर द्वितीयक स्वास्थ्य केन्द्र और तीन लाख आबादी पर हर जिला मुख्यालय में स्वास्थ्य मुख्यालय की स्थापना की जाये
- लोगों को स्वस्थ एवं सुखी जीवन देने की दिशा दिखाने के लिये संरक्षात्मक एवं चिकित्सकीय उपचार का तीन माह का प्रशिक्षण देकर सामाजिक चिकित्सक तैयार किये जायें

मुदालियर कमेटी, 1962

वर्ष 1959 में भारत सरकार ने इस कमेटी का गठन किया, जिसका लक्ष्य स्वास्थ्य व्यवस्था में विकास का मूल्यांकन करना और जिला अस्पतालों के विस्तार, भावी विकास तथा मजबूती को लेकर सुझाव देना था। इस समिति ने भारत में प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा प्रशासन, उप प्रभागीय और जिला अस्पतालों के विकास की तत्कालीन स्थिति को मजबूत करने पर जोर दिया। मुदालियर कमेटी के कुछ प्रमुख सुझाव हैं:

- प्रारंभिक दो पंचवर्षीय योजनाओं में स्वास्थ्य क्षेत्र में किये गये प्रयासों, उपलब्धियों को समन्वित करना
- जिला अस्पतालों में विशेषज्ञ सुविधाओं को उपलब्ध कराना
- स्वास्थ्य सुविधाओं और सेवाओं का क्षेत्रीयकरण करना, यानी राज्य और जिला मुख्यालयों के बीच विभिन्न क्षेत्रीय स्तर पर स्वास्थ्य ढांचे का विकास करना
- यह सुनिश्चित करना कि प्रत्येक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र 40 हजार आबादी को स्वास्थ्य सेवा प्रदान करे
- प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों पर उपलब्ध तत्कालीन सुविधाओं में सुधार करना
- बोहरे कमेटी में दिये गये सुझावों के अनुरूप चिकित्सकीय और स्वास्थ्य सेवाओं का एकीकरण करना
- भारतीय प्रशासनिक सेवा यानी आईएएस की तरह अखिल भारतीय स्वास्थ्य सेवा का गठन

चड्ढा कमेटी, 1963

तत्कालीन स्वास्थ्य सेवा महानिदेशक डॉ. एमएस चड्ढा की अध्यक्षता में इस कमेटी का गठन किया गया था। इसका लक्ष्य राष्ट्रीय मलेरिया उन्मूलन कार्यक्रम की देखरेख और व्यवस्थाओं का अध्ययन करना था। कमेटी के मुख्य सुझाव निम्नवत रहे:

- राष्ट्रीय मलेरिया उन्मूलन कार्यक्रम की निगरानी की जिम्मेदारी सामान्य स्वास्थ्य सेवाओं की होनी चाहिये
- स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं के जरिये घर–घर जाने का मासिक लक्ष्य निर्धारित किया जाये, कमेटी ने प्रत्येक स्वास्थ्य कर्मी के लिये 10 हजार आबादी का लक्ष्य रखने का सुझाव दिया

- अन्य अहम आंकड़े जुटाना और परिवार कल्याण कार्यक्रम का संचालन भी स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं के अतिरिक्त दायित्व हों, ऐसे तीन से चार स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं पर पर्यवेक्षक के तौर पर परिवार कल्याण स्वास्थ्य सहायक हो।
- जिला स्तर पर मरम्मत और रखरखाव का जिम्मा भी सामान्य स्वास्थ्य सेवा के जिम्मे होना चाहिये

मुखर्जी कमेटी, 1965

इस कमेटी का लक्ष्य नियोजन कार्यक्रमों और गतिविधियों के लिये अलग कर्मचारियों की व्यवस्था करना रहा, क्योंकि पूर्ववर्ती कमेटियों के सुझाव के अनुरूप स्वास्थ्य सेवाओं के अलावा परिवार नियोजन, चेचक, कुष्ठ, मलेरिया उन्मूलन जैसे कार्यक्रमों की देखरेख कर पाना राज्यों के लिये संभव नहीं हो पा रहा था। इसका एक मुख्य कारण पर्याप्त बजट का अभाव था। कमेटी ने भारतीय प्रशासन व्यवस्था में बुनियादी स्वास्थ्य व्यवस्था को मजबूत करने पर जोर दिया।

जंगलवाला कमेटी, 1967

इस कमेटी का गठन स्वास्थ्य सेवाओं के हालात तथा समस्याओं के मूल्यांकन और इनके एकीकरण के लिये सुझाव देने के लक्ष्य से किया गया था। कमेटी ने अपनी रिपोर्ट में कहा, एकीकरण की प्रक्रिया का अर्थ क्रांति के बजाय क्रमागत विकास होना चाहिये।

करतार सिंह कमेटी, 1973

केन्द्र सरकार में अतिरिक्त सचिव स्वास्थ्य करतार सिंह की अध्यक्षता में इस कमेटी का गठन किया गया, जिसका लक्ष्य स्वास्थ्य एवं परिवार नियोजन कार्यक्रम से जुड़े बहुउद्देश्यीय कार्यकर्ताओं की कार्यपद्धति और कार्यक्रमों के मूल्यांकन के लिये किया गया। कमेटी ने एकीकृत सुविधाओं को पर्यवेक्षक के तौर पर देखा। कमेटी ने परिवार नियोजन कार्यक्रम और सार्वजनिक स्वास्थ्य व्यवस्था के अंतर्गत बहुउद्देश्यीय कर्मचारियों की आवश्यकता, उनके प्रशिक्षण की आवश्यकताओं, मोबाइल सर्विस यूनिट की स्थापना पर जोर दिया।

श्रीवास्तव समूह रिपोर्ट, 1975

इस समूह का गठन चिकित्सा शिक्षा और स्वास्थ्य सेवा के क्षेत्र में कर्मचारियों की संख्या बढ़ाने के लिये सुझाव देने के मकसद से किया गया था। स्वास्थ्य सहायकों का कैडर विकसित करने के लिये समूह ने उपयुक्त पाठ्यक्रम लागू करने का सुझाव दिया, ताकि प्रशिक्षित चिकित्सा विशेषज्ञों और बहुउद्देश्यीय कर्मचारी बेहतर व प्रभावी स्वास्थ्य सुविधा प्रदान करने में एक–दूसरे का भरपूर सहयोग कर सकें।

पांचवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान 1975 से 1977 तक देश में आपातकाल लागू हो गया। इस अवधि में बड़े पैमाने पर जनसंख्या नियंत्रण के मानक लागू किये गये। राष्ट्रीय जनसंख्या नीति की घोषणा की गयी, जिसका लक्ष्य विकास के लिये निरंतर बढ़ती आबादी पर काबू पाना था और इसके लिये अनिवार्य नसबंदी अभियान चलाया गया। लेकिन आपातकाल हटने और नयी सरकार के गठन के साथ इस नीति को हटा दिया गया। पांचवीं योजना में पेयजल वितरण और स्वच्छता पर भी जोर दिया गया, जिनका नागरिकों के स्वास्थ्य से सीधा संबंध है। छठी पंचवर्षीय योजना में समुदाय अधारित स्वास्थ्य सेवाओं के महत्व पर जोर

दिया गया। इसकी वजह यह थी कि तत्कालीन चिकित्सा और स्वास्थ्य सेवाओं में अस्पतालों, विशेषज्ञ चिकित्सकों व उच्च प्रशिक्षित डॉक्टरों पर जोर दिये जाने से शहरी और अभिजात्य वर्ग तक ही ये सीमित रह गये थे, जबकि ग्रामीण आबादी को अब तक इनका पूरा लाभ नहीं मिल पा रहा था। वर्ष 1983 में राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति की घोषणा की गयी थी। इस नीति में समुदाय आधारित और हर नागरिक की पहुंच में प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाएं मुहैया कराने पर जोर दिया गया। ऐसी चिकित्सकीय सेवाओं के विकास पर ध्यान दिया गया, जिनकी वास्तव में आवश्यकता हो और जो सार्वभौमिक व समग्र हों। इस नीति की खासियत यह थी कि यह स्वास्थ्य सेवाओं के पश्चिम आधारित और मात्र उपचारात्मक व्यवस्था के बजाय संरक्षात्मक और पुनर्वास संबंधी प्राथमिक चिकित्सा सेवा दृष्टिकोण पर जोर देती है। नीति में विकेन्द्रीकृत स्वास्थ्य सेवा व्यवस्था, सामुदायिक सहभागिता और स्वास्थ्य सेवा प्रशासन के गठन पर जोर दिया गया है, जो महामारी प्रभावित क्षेत्रों में विभिन्न स्वास्थ्य कार्यक्रमों को समन्वित और एकीकृत कर सकें।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति 1983 में समग्र स्वास्थ्य सेवा पर जोर तो दिया गया, लेकिन इसे मूलभूत अधिकार के तौर पर स्थापना नहीं दी जा सकी। इस नीति की आलोचना इसलिये की जाती है कि इसमें शामिल कई बिन्दु कागजों पर ही रह गये, जबकि धरातल पर उपयुक्त काम नहीं किया जा सका। वर्ष 2002 की राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति में कई नये नीतिपरक लक्ष्य तय किये गये, जिनमें स्वास्थ्य व्यवस्था में न्यूनमत मानकों के नियमन और नियंत्रण के लिये वैधानिक इकाईयों के गठन, सार्वजनिक स्वास्थ्य संस्थानों के विकेन्द्रीकरण और स्थानीय स्वशासन को सार्वजनिक स्वास्थ्य कार्यक्रमों को लागू करने लायक सशक्त बनाने पर जोर दिया गया। इसके अलावा प्राचीन भारतीय चिकित्सा पद्धतियों और होम्योपैथी से जुड़े चिकित्सकों को भी स्वास्थ्य सेवाओं से जोड़ने की भी व्यवस्था दी गयी। नागरिकों के अच्छे स्वास्थ्य के लिये आवश्यक मानकों को पूरा करने का लक्ष्य नीति में तय किया गया। इस नीति में स्वास्थ्य सेवा से जुड़े अन्य पहलुओं, वित्त, समानता, सार्वजनिक स्वास्थ्य कार्यक्रमों, स्वास्थ्य अवस्थापना ढांचा, स्वास्थ्य सेवा संबंधी शिक्षा, शोधकार्य, गैरसरकारी संस्थाओं की भूमिका, सिविल सोसायटी और गुणवत्तापरक भोजन आदि को भी शामिल किया गया।

वर्ष 2017 में फिर नयी स्वास्थ्य नीति लागू की गयी है। इस नीति में स्वास्थ्य बजट में ढाई प्रतिशत की बढ़ोतरी का प्रस्ताव दिया गया है। सभी सार्वजनिक अस्पतालों में निःशुल्क दवाएं, निःशुल्क जांच, निःशुल्क आपातकालीन और आवश्यक चिकित्सकीय सेवाएं प्रदान करने की बात भी इस नीति में कही गयी है। हालांकि, यह नीति भी स्वास्थ्य को न्यायपरक अधिकार के तौर पर स्थापित नहीं कर पायी है। केन्द्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय सभी स्वास्थ्य नीतियों, कार्यक्रमों और योजनाओं को प्रभावी तौर पर लागू करने का जिम्मा निभाता है। इनमें परिवार कल्याण, प्राथमिक चिकित्सा सेवा, संरक्षा और नियंत्रण आदि शामिल हैं। संवैधानिक व्यवस्था में सार्वजनिक स्वास्थ्य, अस्पताल–डिस्पेंसरी और सफाई व्यवस्था राज्य सूची में रखे गये हैं। जनसंख्या नियंत्रण, परिवार नियोजन, स्वास्थ्य शिक्षा, भोजन और अन्य सामग्री में मिलावट, विषाक्त एवं मादक द्रव्य, चिकित्सा विशेषज्ञ, जन्म–मृत्यु पंजीकरण आदि समवर्ती सूची में शामिल हैं।

5.4 स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय का संगठन (Organization of Ministry of Health)

स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय के मुखिया कैबिनेट मंत्री होते हैं, जिनके साथ राज्यमंत्री या उपमंत्री भी तैनात किये जा सकते हैं, जो संसद के प्रति उत्तरदायी होते हैं। मंत्रालय के कार्यकारी मुखिया भारत

सरकार के स्वास्थ्य सचिव होते हैं। मंत्रालय के अधीन स्वास्थ्य विभाग चिकित्सा, सार्वजनिक स्वास्थ्य के मसलों की देखरेख के साथ दवाओं के नियंत्रण, खाद्य पदार्थों में मिलावट के मामलों को देखता है, जबकि परिवार कल्याण विभाग राज्यों में संचालित विभिन्न कार्यक्रमों की निगरानी के साथ समन्वय, मातृ–शिशु स्वास्थ्य, शिक्षा, मीडिया आदि तकनीकी पहलुओं की देखरेख करता है। राज्य स्तर पर कैबिनेट या राज्यमंत्री स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय का दायित्व संभालते हैं। एक वरिष्ठ आईएएस अधिकारी सचिवालय में विभागीय कार्य संभालता है और वह मंत्री को स्वास्थ्य नीतियों के निर्माण, कार्यक्रमों के संचालन के सुझाव तथा निदेशालय व फील्ड ऑफिसों के माध्यम से निगरानी का काम करते हैं। जिला स्तर पर सिविल सर्जन या मुख्य चिकित्सा अधिकारी यानी सीएमओ स्वास्थ्य विभाग के प्रशासनिक मुखिया होते हैं। सीएमओ जन्म–मृत्यु पंजीकरण के पदेन जिला निबंधक यानी रजिस्ट्रार भी होते हैं। ब्लॉक स्तर पर स्वास्थ्य विभाग का प्रशासनिक नियंत्रण प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र के वरिष्ठ चिकित्सा अधिकारी पर रहता है। उनका जिम्मा विभिन्न स्वास्थ्य कार्यक्रमों, उपचारात्मक सेवाओं को ब्लॉक स्तर पर उपलब्ध कराना होता है। केन्द्र सरकार वित्तीय मदद, निर्देशन के साथ गैरसरकारी संस्थाओं को सामुदायिक स्वास्थ्य सेवाओं के क्षेत्र में प्रोत्साहन देती है। इसमें सामुदायिक स्वास्थ्य सेवाओं पर जोर दिया जाता है।

5.5 भारत में सार्वजनिक स्वास्थ्य संस्थानों की भूमिका (Role of Public Health Organizations in India)

विभिन्न समितियों और उनके सुझावों के अलावा केन्द्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय ने कई अन्य वैधानिक इकाइयों की भी व्यवस्था दी है, जो स्वास्थ्य नीतियों, कार्यक्रमों के सफल संचालन में मददगार बनती हैं। भावी स्वास्थ्य नीतियों और कार्यक्रमों में भी ये सहायक होती हैं। ऐसी कुछ इकाइयां निम्नवत हैं:

मेडिकल काउंसिल ऑफ इंडिया (Medical Council of India)

भारतीय चिकित्सा परिषद या मेडिकल काउंसिल का गठन वर्ष 1956 में भारतीय चिकित्सा परिषद एक्ट के तहत किया गया। परिषद भारत में स्वास्थ्य शिक्षा के क्षेत्र में उच्च मानकों की स्थापना और निगरानी के लिये उत्तरदायी है। परिषद चिकित्सा शिक्षा के लिये आवश्यक न्यूनतम मानक तय करने के साथ मेडिकल कॉलेजों में भी मानकों को तय करती हैं, जिनके आधार पर चिकित्सा शिक्षा प्रदान की जा सके। परिषद के मुख्य कार्य निम्नवत हैं:

- विश्वविद्यालयों में चिकित्सा परास्नातक पाठ्यक्रमों के संचालन संबंधी मानक तय करना
- शिक्षण एवं परीक्षा कार्यों से संबंधित जानकारी एवं सूचनाएं हासिल करना
- चिकित्सा योग्यताओं के संबंध में केन्द्र सरकार के समक्ष प्रस्तुतीकरण
- मेडिकल कॉलेजों का नियमित निरीक्षण और प्रशिक्षण संबंधी सुविधाओं को सक्षम बनाना
- भारतीय मेडिकल रजिस्टर तैयार करना

डेंटल काउंसिल ऑफ इंडिया (Dental Council of India)

डेंटल काउंसिल का गठन वर्ष 1948 में किया गया। इसकी स्थापना भारत में दंत चिकित्सा शिक्षा के नियमन के लिये वैधानिक इकाई के तौर पर की गयी। इसके मुख्य कार्यों में दंत चिकित्सा शिक्षा के पाठ्यक्रमों और सुविधाओं के मानकों की निगरानी करना है। मानकों के नियमन के लिये नियमित निरीक्षण किये जाते हैं। इन निरीक्षणों के माध्यम से भारत में स्वास्थ्य सेवा प्रशासन आगे सुधार और पाठ्यक्रमों के उन्नयन का काम करता है। साथ ही मानकों के अनुरूप सुविधाएं प्रदान करने का काम भी किया जाता है।

इंडियन नर्सिंग काउंसिल (Indian Nursing Council)

1947 में गठित यह परिषद नर्सों, दाइयों, सहायक नर्सों और अन्य स्वास्थ्यकर्मियों को निश्चित मानकों के तहत प्रशिक्षण और निगरानी का दायित्व संभालती है। यह नर्सिंग पाठ्यक्रमों को तैयार करने, अध्यापन संबंधी तकनीकों और विभिन्न राज्यों की परिषदों से समन्वय तथा भारतीय नर्स रजिस्टर में पंजीकरण का भी काम करती है।

फार्मेसी काउंसिल ऑफ इंडिया (Pharmacy Council of India)

वर्ष 1949 में इस परिषद का गठन किया गया। इस परिषद के मुख्य कार्यों में फार्मेसी शिक्षा के मानकों का निर्धारण और निगरानी करना तथा पंजीकरण के लिये आवश्यक मान्यताओं को ध्यान में रखना है। इसके साथ ही सेट्रल रजिस्टर ऑफ फार्मेसिस्ट की देखरेख भी इसका कार्य है।

नेशनल बोर्ड ऑफ एक्जामिनेशन (National Board of Examinations)

परास्नातक परीक्षाओं के मानकों को तय करने के लिये भारत सरकार ने प्रतिष्ठित परीक्षा इकाई का गठन किया है, जिसे नेशनल बोर्ड ऑफ एक्जामिनेशन कहा जाता है। इसका कार्य परास्नातक स्तर पर विदेशी योग्यताओं, मसलन एफआरसीएस और एमआरसीपी की तरह भारत में परीक्षाओं का आयोजन कराना है।

इंडियन काउंसिल ऑफ मेडिकल रिसर्च (Indian Council of Medical Research: ICMR)

1950 में गठित यह स्वायत्त निकाय है, जिसका लक्ष्य बायोमेडिकल शोध को बढ़ावा देना, समन्वय और मानकीकरण करना है। आईसीएमआर के महत्वपूर्ण कार्य निम्नवत हैं:

- रोगों से संरक्षा में आवश्यक शोधकार्यों में सहयोग, संयोजन, प्रोत्साहन तथा ज्ञान–जानकारियों तथा प्रायोगिक मानकों का प्रसार करना
- भारत में चिकित्सकीय वैज्ञानिक शोधकार्यों को बढ़ावा देना और विभिन्न संस्थानों को रोगों, उनसे संरक्षण, करणीय संबंधों तथा उपचार के अध्ययन के लिये मदद और प्रोत्साहन देना
- शोधकार्यों को वित्तीय मदद उपलब्ध कराना
- समान प्रोजेक्ट पर काम कर रहे दूसरे वैज्ञानिकों, संस्थाओं और संगठनों के साथ सूचनाओं का आदान–प्रदान

- शोधपत्र या पत्रिकाओं को तैयार करना और प्रकाशित करना अथवा ऐसी किसी पत्रिका में योगदान करना, ताकि परिषद के भावी उद्देश्यों की पूर्ति की जा सके
- प्रशिक्षु शोधकर्ताओं को प्रोत्साहित करने के लिये फेलोशिप, छात्रवृत्ति और पुरस्कार योजनाओं का संचालन

सेंट्रल काउंसिल ऑफ हेल्थ (Central Council of Health)

केन्द्रीय स्वास्थ्य परिषद या सेंट्रल काउंसिल ऑफ हेल्थ का गठन अनुच्छेद 263 में प्रदत्त प्रावधानों के अनुरूप राष्ट्रपति के आदेश पर अगस्त 1952 में किया गया। परिषद में केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्री अध्यक्ष होते हैं, जबकि सभी राज्यों के स्वास्थ्य मंत्री इसके सदस्य हैं। परिषद का मुख्य कार्य भारत में स्वास्थ्य सेवा प्रशासन को उपचार, संरक्षा, पर्यावरणीय स्वच्छता, पोषण, स्वास्थ्य, शिक्षा और प्रशिक्षण एवं शोधकार्यों के प्रोत्साहन के लिये आवश्यक सुझाव देना है। इसके साथ ही सार्वजनिक स्वास्थ्य और चिकित्सा से जुड़े मसलों में विधि निर्माण का भी काम यह परिषद करती है। त्योहारों, महामारी और गंभीर आपदाओं आदि के दौरान अंतरराज्यीय स्तर पर स्वास्थ्य संबंधी समन्वय स्थापित करना भी परिषद का दायित्व है। उपलब्ध अनुदान के राज्यों को वितरण को लेकर केन्द्र सरकार को यह परिषद सुझाव देती है। इसके अलावा विभिन्न राज्यों में किये गये कार्यों की समयवार समीक्षा भी की जाती है, ताकि दिये गये अनुदान के उपयोग की सही जानकारी उपलब्ध करायी जा सके। साथ ही राज्य और केन्द्रीय स्वास्थ्य प्रशासन के मध्य समन्वय स्थापित करना भी इसका काम है।

5.6 स्वास्थ्य कार्यक्रम एवं योजनाएं (Health Programmes and Schemes)

उपरोक्त सभी इकाइयों के सहयोग से स्वास्थ्य से जुड़े विभिन्न मसलों के निस्तारण के लिये कई कार्यक्रम और योजनाओं का संचालन देश में किया गया है:

- **राष्ट्रीय संक्रामक रोग निगरानी कार्यक्रमः** 1997–98 में यह कार्यक्रम लांच किया गया, जिसका लक्ष्य विभिन्न संक्रामक बीमारियों की रोकथाम करना था
- **राष्ट्रीय वेक्टर बोर्न रोग नियंत्रण कार्यक्रमः** मलेरिया, कालाजार, फिलेरियासिस उन्मूलन के पूर्वसंचालित कार्यक्रमों को दसवीं पंचवर्षीय योजना में विस्तार देते हुये उसमें डेंगू, जापानी इंसेफिलाइटिस जैसे रोगों को भी शामिल किया गया
- **नेशनल एंटी मलेरिया प्रोग्रामः** इस कार्यक्रम के तहत भारत सरकार मलेरिया प्रभावित सभी क्षेत्रों में राज्य सरकारों को तकनीक, उपचार आदि की व्यवस्था उपलब्ध कराती है, ताकि मलेरिया उन्मूलन के लक्ष्य को हासिल किया जा सके
- **नेशनल फिलेरिया कंट्रोल प्रोग्रामः** वर्ष 2004–05 में लिंफेटिक फिलेरियासिस के उन्मूलन के वैश्विक प्रयासों के तहत सात राज्यों के 13 चिह्नित जिलों में इस कार्यक्रम को पायलट प्रोजेक्ट के तौर पर प्रारंभ किया गया
- **कालाजार नियंत्रण कार्यक्रमः** कालाजार यानी काला बुखार या लिस्मेनियासिस को भारत की गंभीर स्वास्थ्य समस्या माना जाता है, बंगाल में यह बीमारी बहुत अधिक होती थी और इसके निरंतर प्रसार को देखते हुये केन्द्र सरकार ने स्थिति को नियंत्रण में लाने के लिये यह कार्यक्रम लांच

किया, विश्व स्वास्थ्य संगठन ने वर्ष 2017 तक कालाजार को पूरी तरह उन्मूलन करने का लक्ष्य तय किया है और भारत सरकार विभिन्न सहयोगियों के साथ इस दिशा में कार्यरत है (www.nhp.gov.in)

- **राष्ट्रीय डेंगू नियंत्रण कार्यक्रमः** भारत में डेंगू का पहला मामला वर्ष 1963 में कलकत्ता में सामने आया था, 1956 से 1993 की अवधि में यह लगातार बढ़ता गया है, चूंकि डेंगू बहुत तेजी से फैलता है, यह भारत की प्रमुख स्वास्थ्य समस्याओं में से एक बन गया, NVBDCP के अनुसार डेंगू का प्रसार आंध्र प्रदेश, गोआ, गुजरात, कर्नाटक, हरियाणा, मध्य प्रदेश, केरल, दिल्ली, महाराष्ट्र, पंजाब और तमिलनाडु में सर्वाधिक है, वर्ष 2010 से 2012 के बीच यह अन्य राज्यों तक भी पहुंच गया, हालांकि डेंगू के कारण होने वाली मौतों पर बेहतर रिपोर्ट, जांच–परीक्षण, उपचार और रोगी प्रबंधन सुविधाओं के जरिये खासी लगाम कसी जा चुकी है (Cecilia, 2014)
- **जापानी इंसेफिलाइटिस नियंत्रण कार्यक्रमः** यह वायरस संक्रमण से होने वाला रोग है, जिसके मामले 26 राज्यों में सामने आते रहे हैं, आंध्र प्रदेश, असम, बिहार, हरियाणा, कर्नाटक, मणिपुर, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल में इसके मामले बार–बार सामने आये हैं, इसे देखते हुये केन्द्र सरकार समय–समय पर राष्ट्रीय स्तरीय टास्क फोर्स का गठन करती रही है, वर्ष 2006 से भारत में इस बीमारी की रोकथाम के लिये टीकाकरण भी प्रारंभ किया जा चुका है
- **एड्स नियंत्रण कार्यक्रमः** वर्ष 2006 में UNAIDS के एक आकलन के अनुसार भारत में पांच लाख से अधिक एचआईवी संक्रमित लोग हैं, भारत में एड्स का पहला मामला वर्ष 1986 में सामने आया था, प्रारंभ में शहरी इलाकों में ही यह बीमारी सामने आयी, लेकिन धीरे–धीरे ग्रामीण क्षेत्रों में भी यह तेजी से बढ़ती गयी, बड़े पैमाने पर महिलाएं और गर्भस्थ शिशु भी इससे संक्रमित हो रहे थे, दूसरी ओर इस रोग से संक्रमित महिलाओं को पुरुषों के मुकाबले लांछन और भेदभाव झेलना पड़ता है, वर्ष 2001 में सरकार ने राष्ट्रीय एड्स संरक्षा और नियंत्रण नीति लागू की और इस महामारी पर रोकथाम का लक्ष्य तय किया
- **राष्ट्रीय कुष्ठ निवारण कार्यक्रमः** 1955 में यह कार्यक्रम प्रारंभ हुआ, लेकिन 1970 में ही निश्चित उपचार की पहचान की जा सकी, जिसका विस्तार 1982 तक जाकर हुआ, इसके बाद वर्ष 1983 में इस कार्यक्रम की रूपरेखा दोबारा तय की गयी, जिसे विश्व बैंक की मदद से आगे बढ़ाया गया, चार विभिन्न चरणों में चलाये गये इस अभियान के बाद वर्ष 2002 में कुष्ठ रोग को वर्ष 2005 तक प्रति दस हजार पर एक व्यक्ति तक ले जाने का लक्ष्य तय किया गया, वर्ष 2005 में रोगोन्मूलन की घोषणा की गयी, लेकिन विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार भारत में अब भी कुष्ठ रोग के नये मामले सामने आ रहे हैं
- **राष्ट्रीय क्षयरोग नियंत्रण कार्यक्रमः** विश्व स्वास्थ्य संगठन और स्वीडिश इंटरनेशनल डेवलपमेंट एजेंसी यानी सीडा की मदद से वर्ष 1992 में यह कार्यक्रम प्रारंभ किया गया, लेकिन कई परेशानियों के चलते यह कार्यक्रम लक्ष्य तक नहीं पहुंच सका ऐसे **में Revised National Tuberculosis Control Programme (RNTPC)** 1997 में लांच किया गया, अब यह कार्यक्रम देश के 632 जिलों में एक अरब आबादी तक विस्तृत है, डॉट्स के तहत 12 लाख से अधिक मरीजों का उपचार चल रहा है और ढाई लाख के करीब लोगों का जीवन बचाया जा चुका है

- **राष्ट्रीय कैंसर नियंत्रण कार्यक्रमः** भारत सरकार के ही एक अनुमान के अनुसार देश में 20 लाख से अधिक लोग कैंसर से पीड़ित हैं, हर साल सात लाख से अधिक नये मामले सामने आते हैं और तीन लाख मौत इसके कारण होती है, नेशनल कैंसर रजिस्ट्री प्रोग्राम से स्पष्ट हुआ है कि भारत में पुरुषों में मुंह, फेफड़े, ग्रासनली और पेट का कैंसर अहम हैं, जबकि महिलाओं में गर्भाश्य, स्तन और मुंह के कैंसर के मामले अधिक मिलते हैं, भारत में मौत के दस कारणों में यह एक है, इस योजना के तहत स्वयंसेवी योजनाओं को कैंसर के प्रति जागरूकता अभियान और रोग की त्वरित पहचान के लिये मदद दी गयी, इसके अलावा जिला कैंसर नियंत्रण योजना, कोबाल्ट थेरेपी के विकास, मेमोग्राफी इकाइयों की स्थापना, सरकारी अस्पतालों में ओंकोलॉजी शाखा के गठन और विभिन्न क्षेत्रीय कैंसर संस्थानों की स्थापना की दिशा में काम किया गया
- **राष्ट्रीय मानसिक स्वास्थ्य कार्यक्रमः** मानसिक रोगी लोगों की मदद और उपचार के लिये वर्ष 1982 में इस कार्यक्रम को प्रारंभ किया गया, मानसिक रोग अस्पतालों के आधुनिकीकरण, लंबे समय तक रहने वाले रोगियों की व्यवस्था, मेडिकल कॉलेजों में मनोचिकित्सा वार्ड की स्थापना इस कार्यक्रम में ध्यान केन्द्रित किया गया, लोगों के स्वास्थ्य के लिहाज से कुछ अन्य संरक्षात्मक कदम भी उठाये गये, जिनमें तंबाकू और सिगरेट उत्पादनों के विज्ञापनों पर रोक शामिल है
- **सेंट्रल ट्यूबरक्लोसिस डिवीजनः** संशोधित राष्ट्रीय क्षय रोग कार्यक्रम की वार्षिक रिपोर्ट वर्ष 2011 में आयी, जिसमें सार्वजनिक स्थानों पर धूम्रपान पर रोक, सिगरेट और अन्य तंबाकू उत्पादों के विज्ञापन पर प्रतिबंध तथा 18 वर्ष से कम आयु के किशोरों को तंबाकू उत्पादों की बिक्री पर रोक लगी
- **खाद्य सुरक्षा एवं पोषण कार्यक्रमः** भारत एकसाथ तीन समस्याओं– कुपोषण, सूक्ष्म पोषण और मोटापा से जूझ रहा है, महिलाओं और बच्चों की बड़ी आबादी कुपोषण और एनीमिया की शिकार है, वहीं राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वे के अनुसार 56 फीसदी विवाहित महिलाएं और 24 प्रतिशत विवाहित पुरुष एनीमिक हैं, बच्चों में पोषण की बात की जाये तो शिशु मृत्यु दर के मामले में भारत अफ्रीकी और दक्षिण एशियाई पड़ोसी देशों से कुछ ही पीछे है, इसे देखते हुये देश में मिड डे मील और खाद्य सुरक्षा कार्यक्रमों का संचालन किया जा रहा है

5.7 निष्कर्ष (Conclusion)

अब तक हम यह जान–समझ चुके हैं कि सरकार किस तरह स्वास्थ्य प्रशासन में केन्द्रीय भूमिका का निर्वहन करती है। नागरिकों को सामाजिक सुरक्षा और स्वास्थ्य सेवाएं प्रदान करना सरकार का दायित्व है और यह जनता का संवैधानिक अधिकार भी है। लेकिन सरकार के अलावा कुछ अन्य सेक्टर भी इस दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। सार्वजनिक संस्थानों के अलावा निजी सेक्टर भी भारत में बेहतर चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवाओं, सुविधाओं को प्रदान करने में मददगार हो सकते हैं। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वे–3 के अनुसार भारत में 70 प्रतिशत शहरी आबादी और 63 प्रतिशत ग्रामीण आबादी को प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा निजी सेक्टर से ही मिल रही है।

5.8 भावी अध्ययन (Further Readings)

- Drèze J (2004) Democracy and the Right to Food. Economic & Political Weekly, 24 April, 24, 1723–1731.
- Drèze J, Khera R, Narayanan S (2008) Early Childhood in India: Facing the Facts. Indian Human Development Journal 1(2), 377–388.
- Goel, S.L, (1980) Health Care Administration: Policy Making and Planning, Volume 2, Sterling Publications, New Delhi
- Cecilia D. Current status of dengue and chikungunya in India. WHO South-East Asia J Public Health 2014; 3(1): 22–27.
- Sachdeva, D. R (2007), Social Welfare Administration in India, Kitab Mahal, Allahabad
- Baru, V Rama (1998) Private Health care in India, Social Characteristics and Trends, Sage Publications, New Delhi
- Sujatha, V, (2014) , Sociology of Health and Medicines, New Perspectives, Oxford University Press, New Delhi.

इकाई- 6

भारत में प्राथमिक स्वास्थ्य एवं निजी स्वास्थ्य सेवा

(Primary Healthcare and Private Healthcarte in India)

6.1 उद्देश्य

6.2 परिचय

6.3 भारत और प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा

6.4 राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति

6.5 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों का ढांचा और कार्य

6.6 आयुष

6.7 भारत में निजी स्वास्थ्य सेवाएं

6.8 निजी सेक्टर का विकास

6.9 निजी अस्पतालों के प्रकार

6.10 निजी स्वास्थ्य सेवा के अवसर एवं लाभ

6.11 सार्वजनिक निजी साझेदारी

6.12 निष्कर्ष

6.13 भावी अध्ययन

6.1 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के बाद हम जान सकेंगे–

- प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं पर ध्यान देने के अंतर्राष्ट्रीय सन्दर्भ
- भारत में प्राथमिक स्वास्थ्य प्रशासन के लिये गठित कमेटियां
- राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति की विशेषताएं और राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन यानी एनआरएचएम
- निजी स्वास्थ्य क्षेत्र– अवसर, प्रकार, संस्थान, लाभ, निजी सार्वजनिक साझेदारी और चुनौतियां

6.2 परिचय (Introduction)

1978 में सोवियत यूनियन में प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं पर अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित किया गया और अल्मा अत्ता घोषणाओं को पारित किया गया, जिनमें विभिन्न देशों में सरकारों के स्तर पर संरक्षण को महत्व देने तथा स्वास्थ्य सेवाओं को बढ़ावा देने की जरूरत जतायी गयी। सम्मेलन में यह सुनिश्चित किया गया कि, सिर्फ रोगों से मुक्ति नहीं, बल्कि संपूर्ण शारीरिक, मानसिक और सामाजिक सकुशलता बुनियादी मानव अधिकार है और स्वास्थ्य के क्षेत्र में उच्चतम स्तर तक पहुंचना विश्वव्यापी सामाजिक लक्ष्य है, जिसके लिये स्वास्थ्य सेक्टर के साथ कई अन्य सामाजिक और आर्थिक सेक्टरों को भी शामिल किया जाना चाहिये। घोषणा में शामिल अन्य अहम बिन्दुओं में स्वास्थ्य सेक्टर में असमानता (विशेषकर विकसित और विकासशील देशों के बीच), जीवनस्तर में सुधार के लिये सामाजिक–आर्थिक समन्वय, स्वास्थ्य नीतियों के नियोजन और क्रियान्वयन में लोकतांत्रिक दृष्टिकोण, सतत और समुचित स्वास्थ्य सेवाएं मुहैया कराने को लेकर सरकारों का उत्तरदायित्व, समुदायों को वैज्ञानिक एवं सामाजिक तौर पर स्वीकृत चिकित्सकीय सेवाएं मुहैया कराना जो उनकी पहुंच के दायरे में हों और इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिये देशों के बीच परस्पर बेहतर समन्वय और साझेदारी की आवश्यकता शामिल हैं। घोषणा के अनुसार प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा अनिवार्य स्वास्थ्य सेवा है, जिसके लिये लोगों और समुदायों के साथ व्यावहारिकता, वैज्ञानिक दक्षता, सामाजिक स्वीकृति और सार्वभौमिक तकनीक का इस्तेमाल इस तरह जरूरी है कि उनकी पूर्ण सहभागिता सुनिश्चित की जा सके। साथ ही प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा के विकास के लिये हर स्तर पर होने वाले खर्च को समुदाय और देश आसानी से वहन कर सकें, यह भी आवश्यक है। घोषणा में वर्ष 2000 तक सबके लिये स्वास्थ्य सेवा उपलब्ध कराने का लक्ष्य तय किया गया, जिसके लिये सभी देशों से विश्व स्वास्थ्य संगठन, यूनिसेफ, गैर सरकारी संगठनों और अन्य सहयोगी इकाइयों के साथ मिलकर काम करने की जरूरत जतायी गयी। इस तरह लक्ष्य को हासिल करने के लिये पांच मूलबिन्दु तय किये गये, जो निम्नवत हैं:

- स्वास्थ्य के क्षेत्र में असमानता और उपेक्षा को कम करना (universal coverage reforms)

- लोगों की जरूरतों और अपेक्षाओं के अनुरूप स्वास्थ्य सेवाओं की व्यवस्था करना (service delivery reforms)
- सभी सेक्टरों में स्वास्थ्य का एकीकरण करना (public policy reforms)
- नीतियों के निर्माण में समन्वयकारी मॉडलों का इस्तेमाल करना (leadership reforms)
- हितधारकों की सहभागिता में वृद्धि करना

भारत समेत विभिन्न देशों ने वर्ष 2015 तक आठ मिलेनियम डेवलपमेंट गोल (MDG"s) को हासिल करने का लक्ष्य तय किया, जिनमें से तीन प्रमुख हैं। ये हैं– शिशु मृत्युदर में गिरावट, मृत्युदर में सुधार और एचआईवी–एड्स, मलेरिया व अन्य रोगों का उन्मूलन। वर्तमान में सतत विकास लक्ष्यों को वर्ष 2030 तक हासिल करने का लक्ष्य रखा गया है। वर्ल्ड हेल्थ स्टेटिस्टिक्स 2017 में 21 स्वास्थ्य सतत विकास गोल (SDG) की जानकारी दी गयी है, जिनमें 35 सूचकांक शामिल किये गये हैं।

6.3 भारत और प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा (India and Primary Healthcare)

भारत में अल्मा अत्ता घोषणा से पहले ही प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा के महत्व की पहचान कर ली गयी थी। वर्ष 1946 में भोरे कमेटी की रिपोर्ट ने भारत में स्वास्थ्य सेवा व्यवस्था की बुनियाद रखने का काम किया। यह कमेटी ब्रिटिश हुकूमत द्वारा वर्ष 1943 में गठित की गयी, जिसकी रिपोर्ट 1946 में प्रकाशित हुयी, जिसमें देश की तात्कालिक स्वास्थ्य परिस्थितियों के बारे में जानकारी दी गयी। कमेटी ने स्वास्थ्य सेवा को सामाजिक जिम्मेदारी के तौर पर देखा और सामुदायिक सहभागिता के महत्व को स्पष्ट किया। इस कमेटी के सुझावों में चिकित्सकीय क्षेत्र के सामाजिक तौर पर कार्य करने पर जोर दिया गया। कमेटी के कुछ अहम सुझाव निम्न हैं:

- सभी प्रशासनिक स्तरों पर संरक्षात्मक एवं उपचारात्मक सेवाओं का एकीकरण
- ग्राम स्वास्थ्य कमेटियों का गठन
- सामाजिक चिकित्सकों का प्रावधान
- स्वास्थ्य सेवा विभाग में अंतर क्षेत्रीय दृष्टिकोण
- सामाजिक चिकित्सक तैयार करने के लिये संरक्षात्मक एवं सामाजिक उपचार का प्रशिक्षण

भारत में अलग–अलग समय पर विभिन्न स्वास्थ्य कमेटियों का गठन किया गया, जिनका लक्ष्य विभिन्न पहलुओं का मूल्यांकन करना था। उदाहरण के लिये वर्ष 1962 में मुदालियर कमेटी का गठन स्वास्थ्य व्यवस्था के विकास के मूल्यांकन, जिला अस्पतालों को मजबूत करने और भारत में स्वास्थ्य सेवाओं के भावी विकास तथा विस्तार के लिये सुझाव देने के मकसद से किया गया। इस कमेटी ने मौजूदा प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं को मजबूत करने और उप प्रभागीय एवं जिला अस्पतालों को रेफरल सेंटर के तौर पर विकसित करने पर जोर दिया। इसी तरह वर्ष 1965 में मुखर्जी कमेटी के गठन का मकसद योजनागत कार्यक्रमों के लिये अलग से स्टाफ की व्यवस्था और भारत में बुनियादी स्वास्थ्य सेवाओं को उच्च प्रशासनिक स्तर तक मजबूत करने के लिये सुझाव देना था। जंगलवाला कमेटी, 1967 ने स्वास्थ्य सेवाओं के एकीकरण पर जोर दिया तो 1973 में गठित करतार सिंह कमेटी ने स्वास्थ्य एवं परिवार नियोजन के तहत बहुउद्देश्यीय कर्मचारियों के प्रशिक्षण का सुझाव दिया। 1975 में श्रीवास्तव रिपोर्ट में श्रमशक्ति को बढ़ाने के

लिये चिकित्सा शिक्षा के बढावे के लिये समूहों के गठन की बात कही गयी। पंचवर्षीय योजनाओं के गठन के साथ ही 1952 में समाज के विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में विकास के लिये सामुदायिक विकास कार्यक्रम भी प्रारंभ किये गये। पंचवर्षीय योजनाओं के साथ विभिन्न स्वास्थ्य कार्यक्रमों के संचालन से देश में स्वास्थ्य परिस्थितियों में खासे बदलाव दर्ज किये गये।

6.4 राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति (Nationa Health Policy)

1978 में भारत ने अल्मा अत्ता घोषणापत्र पर हस्ताक्षर किये और वर्ष 2000 तक सबके लिये स्वास्थ्य के लक्ष्य को अंगीकार किया। घोषणा के अनुरूप लक्ष्यों को हासिल करने के लिये छठी पंचवर्षीय योजना के दौरान वर्ष 1983 में भारत में पहली राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति लागू की गयी। इस नीति में सार्वभौमिक, समग्र और समुदाय की वास्तविक आवश्यकताओं के अनुरूप ऐसी स्वास्थ्य सुविधाएं–सेवाएं मुहैया कराने का लक्ष्य तय किया गया, जो लोगों के लिये कम से कम लागत में हासिल हों (MoHFW, 1983, 3-4). इस नीति की विशेषता यह थी कि इसमें उपचार आधारित पश्चिमी स्वास्थ्य मॉडल के बजाय संरक्षा, पुनर्वास, प्रोत्साहन के दृष्टिकोण के साथ विकेन्द्रीकृत स्वास्थ्य व्यवस्था के विकास पर जोर दिया गया, जिसमें सामुदायिक सहभागिता, महामारी प्रभावित क्षेत्रों की पहचान, विभिन्न स्वास्थ्य कार्यक्रमों के एकीकरण शामिल थे। हालांकि, समग्र स्वास्थ्य सेवाओं की दिशा में प्रयास करने के बावजूद यह नीति स्वास्थ्य को मूलभूत अधिकार के तौर पर स्थापित नहीं कर सकी। इस नीति की आलोचना इसलिये हुयी कि कागजों पर तो बड़े दावे किये गये, लेकिन जमीन पर उसके मुकाबले काम नहीं हो सका।

वर्ष 2000 में राष्ट्रीय जनसंख्या नीति लागू की गयी। इसने प्रजनन, मात–शिशु स्वास्थ्य की आवश्यकताओं को स्पष्ट करते हुये संबंधित लक्ष्यों को हासिल करने के लिये जरूरी कार्यढांचा और रणनीति तय की। गर्भनिरोध, व्यक्तिगत स्वास्थ्य, वित्तीय मदद, प्रोत्साहन–पुरस्कार आदि के मसलों को इस नीति में शामिल किया गया। इस नीति का लक्ष्य वर्ष 2045 तक जनसंख्या को स्थिर बनाये रखना है।

वर्ष 2002 में दूसरी राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति लागू हुयी। इसके तहत चिकित्सकीय संस्थानों में न्यूनतम मानको को लागू करने, सार्वजनिक स्वास्थ्य संस्थानों के विकेन्द्रीकरण और स्थानीय स्वयं सहायता समूहों को मजबूत करने का लक्ष्य तय किया गया। नीति में भारतीय पारंपरिक चिकित्सा व्यवस्थाओं से जुड़े चिकित्सकों को भी स्वास्थ्य सेवाओं में शामिल किया गया। नीति में स्वास्थ्य से जुड़े समानता, वित्त, वास्तविक स्वास्थ्य कार्यक्रमों, सार्वजनिक स्वास्थ्य अवस्थापना, स्वास्थ्य शोधकार्य, शिक्षा, गैरसरकारी संस्थाओं की भूमिका, सिविल सोसायटी, खाद्य सुरक्षा मानक जैसे पहलुओं को भी समन्वित किया गया।

वर्ष 2005 में राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन यानी एनआरएचएम प्रारंभ हुआ। इसका लक्ष्य ग्रामीण आबादी को सस्ती, सुलभ एवं गुणवत्तापरक स्वास्थ्य सेवा उपलब्ध कराना था, जिसमें उपेक्षित समुदायों और समूहों पर विशेष ध्यान केन्द्रित किया गया। स्वास्थ्य सुविधाओं के साथ पेयजल, स्वच्छता, शिक्षा, लैंगिक समानता जैसे पहलुओं को भी इसमें शामिल किया गया। वर्ष 2013 में राष्ट्रीय शहरी स्वास्थ्य मिशन यानी एनयूआरएम को भी इसके उपभाग के तौर पर मिशन से जोड़ा गया। इस मिशन ने ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोगों की स्वास्थ्य व्यवस्था एवं स्थिति में बेहद अपेक्षित सुधार किया है। मिशन के लक्ष्यों में सुधारीकृत स्वास्थ्य सेवाओं की सुलभता, सबके लिये गुणवत्तापरक चिकिंत्सा, केन्द्र–राज्य और स्थानीय शासन के मध्य बेहतर साझेदारी और समन्वय, पंचायतीराज संस्थाओं तथा समुदायों की प्रबंधन में सहभागिता की

सुनिश्चितता और अवस्थापना ढांचा, सामाजिक न्याय और समानता को प्रोत्साहन, राज्यों के लिये लचीले तंत्र की स्थापना, स्थानीय स्तर पर समुदाय आधारित पहलों को बढ़ावा देना शामिल हैं। संरक्षात्मक और उपचारात्मक स्वास्थ्य के लिहाज से इसके कुछ उद्देश्य निम्नवत हैं:

- शिशु एवं मातृ मृत्युदर में गिरावट लाना
- खाद्य एवं पोषण की सार्वजनिक सेवाओं तक सार्वभौमिक पहुंच
- स्वच्छता एवं हाईजीन
- महिलाओं एवं शिशुओं के लिये बेहतर स्वास्थ्य सुविधाएं और टीकाकरण
- संक्रामक और गैरसंक्रामक रोगों से संरक्षण
- एकीकृत समग्र प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं की सुलभता
- जनसंख्या नियंत्रण, लैंगिक एवं जनसांख्यिकीय संतुलन
- स्थानीय स्वास्थ्य परंपराओं को पुनर्जीवित करना और आयुष को मुख्यधारा में लाना
- स्वस्थ जीवनशैली को प्रोत्साहन देना

6.5 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों का ढांचा और कार्य (Structure and Functions of PHCs)

भारत समेत किसी भी देश में प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं को ही स्वास्थ्य सेवाओं का मूल आधार माना जाता है। यह समाज के सभी स्तरों–वर्गों के लोगों के संरक्षण एवं स्वास्थ्य प्रोत्साहन का काम करता है। प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों के माध्यम से प्रदान की जाती है। हमारी स्वास्थ्य नीति में तीन स्तरीय स्वास्थ्य ढांचे की परिकल्पना की गयी है, जिनमें प्राथमिक, द्वितीयक और क्षेत्रीय स्वास्थ्य सेवाएं शामिल हैं। प्राथमिक स्तर की रूपरेखा तीन प्रकार के स्वास्थ्य संस्थानों से बनती है, इनमें तीन से पांच हजार आबादी के लिये उपकेन्द्र, 20 हजार से 30 हजार आबादी के लिये प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र और हर चार प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों के लिये परामर्श केन्द्र यानी रेफरल सेंटर के तौर पर एक सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र जिसका दायरा 80 हजार से एक लाख 20 हजार आबादी तक हो। इस व्यवस्था में जिला अस्पतालों को ग्रामीण आबादी के लिये द्वितीयक केन्द्र और शहरी आबादी के लिये प्राथमिक केन्द्र के तौर पर रखा गया है। क्षेत्रीय स्वास्थ्य सुविधाएं शहरी क्षेत्रों में मौजूद स्वास्थ्य सेवा संस्थानों की ओर से उपलब्ध कराने की व्यवस्था रखी गयी है, जहां पर्याप्त उपकरण, जांच और परीक्षण की बेहतर सुविधाएं उपलब्ध हों। योजना आयोग ने प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों के मूल्यांकन के दौरान पाया कि इस नीति को लागू करने के दौरान ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में स्वास्थ्य संस्थानों का एक विस्तृत नेटवर्क तैयार हो गया है और स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण कार्यक्रमों के तहत नियोजन में आधारभूत संसाधन भी उपलब्ध कराये गये हैं। स्वास्थ्य सेवा सुविधाओं की उपयोगिता और उपलब्धता में बढ़ोतरी से देश की आबादी के स्वास्थ्य में भी सुधार दर्ज किया गया है, जो बीते 50 वर्षों में औसत आयु में वृद्धि, जन्मदर में कमी और मृत्युदर में गिरावट से परिलक्षित होता है। इसके बावजूद लक्ष्य अब भी असमान है, विभिन्न राज्यों और जिलों तथा शहरी और ग्रामीण लोगों के बीच अब भी असमानता चिह्नित की जा सकती है। प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा के लक्ष्य मुख्यतः स्वास्थ्य सेवा के क्षेत्र में सामाजिक असमानता और उपेक्षा को कम करना, लोगों की आवश्यकताओं के अनुरूप और उनके आसपास ही स्वास्थ्य सेवा संगठनों की उपलब्धता, सभी सेक्टरों में एकीकरण, सार्वजनिक नीतियों में सुधार, नीतियों के मॉडलों में समन्वय और हितधारकों की सहभागिता बढ़ाना है।

प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों का मकसद सामुदायिक सहभागिता को प्रोत्साहन देने के साथ बुनियादी स्वास्थ्य सुविधाओं को उपलब्ध कराना है। इसके कुछ लक्ष्य निम्न हैं:

- चिकित्सा शिक्षा
- मातृ–शिशु स्वास्थ्य एवं परिवार नियोजन
- स्वच्छ पेयजल वितरण और बुनियादी स्वच्छता
- स्थानिक बीमारियों से संरक्षा और नियंत्रण
- गतिशील सांख्यिकीय आंकड़ों का संग्रहीकरण और रिपोर्ट तैयार करना
- स्वास्थ्य के बारे में शिक्षा
- राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रमों का संचालन
- परामर्श सेवाएं
- स्वास्थ्य कर्मियों, स्थानीय दाइयों और स्वास्थ्य सहायकों को प्रशिक्षण की सुविधा
- बुनियादी प्रयोगशाला सेवाएं

इन सभी सेवाओं के संचालन के लिये स्वास्थ्य विशेषज्ञों की पूरी व्यवस्था की आवश्यकता होती है, जिनमें चिकित्सा अधिकारी, पुरुष और महिला स्वास्थ्य सहायक, महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता, सहायक नर्स, दाई, फार्मेसिस्ट, ब्लॉक प्रसार शिक्षक, लैब टेक्नीशियन, ड्राइवर, लिपिकीय कर्मी और सहायक व चतुर्थश्रेणी कर्मचारी। चिकित्सा अधिकारी इस समूह का मुखिया होता है और वह प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र पर बाकी सभी कर्मियों की निगरानी का काम करता है। चिकित्सा अधिकारी की प्राथमिक जिम्मेदारी यह है कि वह केन्द्र पर चिकित्सा सुविधाएं प्रदान करें और राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रमों को सफलतापूर्वक लागू करें। ग्रामीण स्तर पर समुदाय और स्वास्थ्य सेवाओं के समन्वय में आशा और आंगनबाड़ी कार्यकर्ताओं की अहम भूमिका रहती है। आशा (Accredited Social Health Activists) कार्यकर्ता राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन के तहत द्वारा नियुक्त होती हैं। आशा का उसी गांव का निवासी होना आवश्यक है, जहां वह काम करने वाली है। 25 से 45 वर्ष तक की विवाहित, तलाकशुदा या विधवा महिला का चयन आशा बनने के लिये किया जाता है। आशा का साक्षर होना आवश्यक है और इसमें उन महिलाओं को प्राथमिकता दी जाती है तो दसवीं तक पढ़ी हुयी हों। इस नियम से सिर्फ तभी छूट दी जाती है, जब इस मानक के अनुरूप कोई महिला न हो। आंगनबाड़ी कार्यकर्ता गांवों में माताओं और शिशुओं के स्वास्थ्य की जिम्मेदारी संभालती हैं। यह एकीकृत बाल विकास योजना (ICDS) के अंतर्गत प्रारंभ हुयी थी, जिसका लक्ष्य शिशुओं को कुपोषणमुक्त करना था। भोरे कमेटी ने 1946 की अपनी रिपोर्ट में देश में समग्र स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता की जरूरत जतायी थी, जो निम्न हैं:

- **संरक्षात्मक सेवाएं:** सुरक्षा ही उपचार से बेहतर है, इस पुरानी कहावत से संरक्षण की अहमियत स्पष्ट होती है। ऐसे में रोग को टीकाकरण, स्वच्छता और साफ पर्यावरण आदि से रोका जा सकता है। रोग के बढ़ने से पहले ही उसे नियंत्रित करना आवश्यक है।

- **उपचारात्मक सेवाएं:** अस्पतालों में मुख्यतः उपचारात्मक सेवाएं दी जाती हैं। वहां रोगों की देखभाल के लिये दवाओं और थेरेपी का इस्तेमाल किया जाता है। अस्पतालों में उपचारात्मक सेवाएं ही प्रधान होती हैं।
- **पुनर्वास सेवाएं:** उपचारात्मक सेवाओं के बाद भी कई बार कुछ परिस्थितियां ऐसी होती हैं, जिनमें रोग पूरी तरह मिटता नहीं है। उदहरण के लिये कुष्ठ, शारीरिक अक्षमताएं या दिव्यांगता। ऐसे मामलों में रोगी को जीवनभर विशेष देखभाल की आवश्यकता होती है। ऐसे में पुनर्वास सेवाओं की मदद से उन्हें सामान्य जीवन जीने का अवसर दिया जा सकता है। इन सेवाओं में चिकित्सकीय से अधिक सामाजिक, शैक्षिक, काउंसिलिंग और व्यावसायिक सेवाओं को शामिल किया जाता है।
- **प्रोत्साहन सेवाएं:** उपरोक्त तीन के अलावा प्रोत्साहन सेवाएं भी स्वस्थ नागरिकों और स्वस्थ देश को सुनिश्चित करने के लिये आवश्यक हैं। स्वास्थ्य शिक्षा, पर्यावरणीय सुधार, पोषण, जीवनशैली और व्यवहार में परिवर्तन भी स्वस्थ समुदाय का लक्ष्य हासिल करने के लिये आवश्यक हैं।

6.6 आयुष (AYUSH)

भारत आयुर्वेद, सिद्ध जैसी पारंपरिक चिकित्सा व्यवस्थाओं का घर है, जिनका काल पांच हजार साल से भी पुराना रहा है। इन स्वास्थ्य एवं चिकित्सा व्यवस्थाओं से जुड़े विशेषज्ञों को प्रारंभ में औपचारिक स्वरूप नहीं दिया गया था। उन्हें निजी चिकित्सकों की तरह देखा जाता था। 1995 में Indian System of Medicine and Homeopathy विभाग का गठन किया गया था, जिसे बाद में Ministry for Ayurveda, Yoga, Unani, Siddha and Homeopathy (AYUSH) नाम देकर वर्ष 2014 में स्थापित किया गया। इस मंत्रालय का मुख्य लक्ष्य स्वास्थ्य सेवाओं की आयुष व्यवस्थाओं के श्रेष्ठ विकास के साथ स्वास्थ्य सेवाओं में इनका प्रचार करना और शोधकार्यों तथा इन व्यवस्थाओं में चिकित्सा शिक्षा का विकास भी है। भारत में प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं में अब भी कई कमियां हैं, जिन्हें आयुष के माध्यम से दूर किया जा सकता है।

6.7 भारत में निजी स्वास्थ्य सेवाएं (Private Healthcare in India)

भारत में स्वास्थ्य सेवा सबसे बड़ा सेवाक्षेत्र बन गया है और इसके चलते इसमें प्रतिस्पर्धा में भी लगातार बढ़ोतरी हुयी है। इस क्षेत्र में कई हितधारक हैं, लेकिन निजी हितधारकों की सबसे बड़ी हिस्सेदारी है। वर्ष 1982 की राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति में स्वास्थ्य क्षेत्र में संसाधनों की खामियों की पहचान की गयी और स्पष्ट किया गया कि ये खामियां ही बेहतर स्वास्थ्य सुविधाओं की राह में बाधा बनी हुयी हैं। नीति में बेहतर और प्रभावी स्वास्थ्य सेवाओं के विस्तार के लिये राज्यों को स्वास्थ्य क्षेत्र में निजी सेक्टर को बढ़ावा देने का सुझाव दिया। हम पाते हैं कि भारत में स्वास्थ्य सेवाओं में निजी क्षेत्र का विकास कई चरणों और स्तरों में हुआ है। वर्ष 1998 तक निजी सेक्टर 80 फीसदी चल स्वास्थ्य सेवाएं और 60 फीसदी आपात चिकित्सा सेवा मुहैया कराने लगा था। भारत में स्वास्थ्य क्षेत्र पर किया जाने वाला खर्चा बेहद कम है, जो सकल घरेलू उत्पाद का महज एक फीसदी है, जबकि वैश्विक औसत 5.99 प्रतिशत है। वर्ष 2017 की राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति में स्वास्थ्य क्षेत्र पर होने वाले खर्चे को ढाई प्रतिशत तक करने का लक्ष्य रखा गया है। सार्वजनिक स्वास्थ्य पर किया जाने वाला यह कम खर्चा ही यहां निजी सेक्टर को आगे बढ़ाने का जरिया बनता है। 71वें नेशनल सैंपल सर्वे (जनवरी से जून 2014) ने स्पष्ट किया कि ग्रामीण क्षेत्रों में अस्पतालों में

भर्ती होने के 43 प्रतिश ही मामले सार्वजनिक अस्पतालों के रहे, जबकि 58 फीसदी निजी अस्पतालों की ओर गये। इसी तरह शहरी क्षेत्रों में सार्वजनिक स्वास्थ्य केन्द्रों और निजी अस्पतालों की यह प्रतिशतता क्रमशः 32 और 80 प्रतिशत रही। सर्वे रिपोर्ट साफ करती है कि बीते दो दशकों में सार्वजनिक अस्पतालों में रोगियों के उपचार में निरंतर गिरावट आयी है। इससे भारत में स्वास्थ्य सेवाओं का ऐसा सेक्टर विकसित हो गया है, जो सार्वजनिक और निजी सेक्टर के बीच असमानतापूर्वक बिखरा हुआ है। देश में लोगों द्वारा स्वास्थ्य पर किये जाने वाले खर्च का महज 30 प्रतिशत ही सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं में जाता है, जबकि बाकी 70 फीसदी निजी क्षेत्र में खर्च किया जा रहा है।

6.8 निजी सेक्टर का विकास (Growth of Private Sector)

90 के दशक में भारतीय बाजार अर्थव्यवस्था में उदारीकरण को बढ़ावा दिये जाने के बाद स्वास्थ्य सेवाओं के क्षेत्र में भी निजी सेक्टर के निवेश में खासी वृद्धि आयी है। निजी सेक्टर सिर्फ चिकित्सकीय सेवाओं तक ही सीमित नहीं है, बल्कि अन्य अनुषंगी सेवाओं, जैसे चिकित्सा शिक्षा और प्रशिक्षण, तकनीक एवं परीक्षण, फार्मेस्यूटिकल उत्पादन और विपणन में भी निजी सेक्टर शामिल हुआ है। निजी सेक्टर बड़े अस्पतालों तक ही सीमित नही है, बल्कि छोटे क्लीनिक, डिस्पेंसरियां, नर्सिंग होम, पॉलीक्लीनिक और निजी चिकित्सकों तक इसका विस्तार है। आयुर्वेद, सिद्ध और होम्योपैथ व अन्य पारंपरिक चिकित्सा व्यवस्थाएं भी इसी सेक्टर में शामिल हैं। नेशनल कमीशन ऑन मैक्रोइकोनॉमिक्स एंड हेल्थ की रिपोर्ट स्पष्ट करती है कि ये निजी स्वास्थ्य केन्द्र सभी तरह की चिकित्सा–स्वास्थ्य सुविधाएं उपलब्ध कराते हैं और आवासीय कॉलोनियों के आसपास के बाजारों में इन्हें देखा जा सकत है। लेकिन, स्थान, मानक, लागत आदि बिन्दुओं पर नियंत्रण और नियमन के अभाव ने इन निजी केन्द्रों को कमजोर इलाकों में स्वतंत्र रूप से काम करने और लोगों को संदेहात्मक चिकित्सा प्रदान करने की छूट सी दे दी है। सरकारी अस्पतालों या उनमें उपकरणों और सुविधाओं के अभाव में निर्धन वर्गों के पास इन निजी केन्द्रों पर जाने के अलावा और कोई विकल्प नहीं बचता है।

परिवहन भी स्वास्थ्य सेवाओं का एकीकृत भाग है। शहरी क्षेत्रों में आपात या आवश्यक स्थितियों से निपटने में ये निजी केन्द्र ही मददगार बनकर सामने आते है। हालांकि, शहरी क्षेत्रों के मुकाबले ग्रामीण क्षेत्रों में ये अलग नहीं नजर आते है। निजी सेक्टर ने देश के ग्रामीण क्षेत्रों तक सेवाओं का विस्तार किया है। वर्तमान दौर में निजी स्वास्थ्य सेक्टर ने प्राथमिक सुविधा के लिहाज से सार्वजनिक स्वास्थ्य सेक्टर को कहीं पीछे छोड़ दिया है और आज निजी सेक्टर ही भारत में स्वास्थ्य सेवाओं का अगुवा बना नजर आता है। स्थिति यह है कि देश में 75 प्रतिशत से अधिक विशेषज्ञ डॉक्टर और 85 फीसदी से अधिक तकनीकी व्यवस्था निजी सेक्टर में ही उपलब्ध हैं। ठोस नीतियों और स्वास्थ्य बीमा योजनाओं के अभाव में भी निर्धन वर्गों के लोगों को निजी सेक्टर में ही जाना पड़ता है। इसमें परिवहन और दिहाड़ी छूटने की लागत भी अप्रत्यक्ष रूप से जुड़ जाती है, क्योंकि अधिकतर निजी स्वास्थ्य केन्द्र शहरी क्षेत्रों में ही हैं। हाल के वर्षों में मलेरिया, श्वसन रोगों के उपचार, प्रसव, नेत्र चिकित्सा, मोतियाबिंद, दौरों आदि के इलाज और ऑपरेशन की सुविधा पर निजी सेक्टर का एकाधिकार बढ़ता गया है, ऐसे में निजी अस्पतालों पर निर्भरता अपरिहार्य है। 'निजी सेक्टर में मिलने वाली सुविधाओं की लागत पूंजी, ब्याजदर, श्राममूल्य, किराया, तकनीक आदि कारकों से प्रभावित होती है। जबकि प्रतिस्पर्धात्मक पहलू तीन बिंदुओं पर निर्भर करता है, 1. उपचार करने वाले चिकित्सक का अनुभव, 2. तकनीक और 3. अवस्थिति यानी लोकेशन, जो कई बार बाधा का कारण भी

बनती है।' (RNCMH, 2006) निजी अस्पतालों के अलावा कई स्वयंसेवी संगठनों, गैरसरकारी संस्थाओं, ट्रस्टों द्वारा संचालित कल्याणकारी अस्पतालों के स्तर पर भी पुनर्वास सेवा संबंधी कार्य किये जाते हैं, जैसे कुष्ठ आश्रम, अंधता निवारण शिविरों का संचालन, कैंसर जागरूकता अभियान आदि। भले ही इनका लक्षित समूह बेहद छोटी आबादी रहती हो, लेकिन इन स्वयंसेवी संगठनों ने यह साबित किया है कि वे बेहद कम लागत पर निर्धन वर्गों तक अच्छी और गुणवत्तापरक स्वास्थ्य सेवाएं मुहैया करा पाने में सक्षम हैं।

6.9 निजी अस्पतालों के प्रकार (Types of Private Hospitals)

हम पाते हैं कि भारत में निजी सेवाप्रदाताओं की विभिन्न विशेषताएं हैं। इसे बेहतर समझने के लिये हम उन्हें प्राथमिक, द्वितीयक और क्षेत्रीय या प्रांतीय सेवाप्रदाता के तौर पर देख सकते हैं।

- **प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाः** भारत में प्राथमिक स्वास्थ्य के लिहाज से ग्रामीण और शहरी दोनों ही क्षेत्र में व्यक्तिगत निजी चिकित्सक बहुतायत में दिखते हैं। वे पंजीकृत या गैरपंजीकृत दोनों ही तरह के हो सकते हैं। वे मुख्यतः लोगों को उपचारात्मक सेवाएं प्रदान करते हैं। किसी क्षेत्र में उन तक त्वरित पहुंच उन्हें व्यवहार्य बनाती है। आयुर्वेद, सिद्ध और अन्य पारंपरिक चिकित्सक भी इस श्रेणी में रखे जा सकते हैं।
- **द्वितीयक स्वास्थ्य सेवाः** इस श्रेणी में छोटे क्लीनिक और नर्सिंग होम को रखा जा सकता है, जिनका संचालन व्यक्तिगत अथवा छोटे समूह के तौर पर किया जा रहा हो। इनकी क्षमता 10 से 50 मरीजों को भर्ती करने की हो सकती है। शहरी क्षेत्रों में ऐसे केन्द्रों में अधिक क्षमता हो सकती है और वहां बेहतर सुविधाएं, तकनीक भी उपलब्ध होती है। इस तरह के केन्द्र ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में हो सकते हैं। भारत की बड़ी आबादी इलाज के लिये इन केन्द्रों पर निर्भर है।
- **क्षेत्रीय सेक्टरः** इसमें मल्टीस्पेशलिटी या सुपरस्पेशलिटी अस्पताल आते हैं, जिनका संचालन व्यावसायिक समूहों, कॉपरपोरेट, प्राइवेट या पब्लिक लिमिटेड द्वारा किया जाता है। इस तरह के केन्द्रों की स्थापना में भारी निवेश किया जाता है और ऐसे अस्पताल महानगरों या बड़े नगरों में ही स्थापित होते हैं।

नेशनल सैंपल सर्वे की रिपोर्ट बताती है कि भारत में 50 प्रतिशत से अधिक मरीज निजी डॉक्टरों के यहां भर्ती हो रहे हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में सिर्फ 18 प्रतिशत मरीज ही सार्वजनिक अस्पतालों में आते हैं। प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों पर यह प्रतिशतता महज पांच प्रतिशत है, जबकि सार्वजनिक औषधालयों में तीन फीसदी ही मरीज पहुंच रहे हैं। हालांकि, ग्रामीण क्षेत्रों के मुकाबले शहरी क्षेत्रों में सार्वजनिक स्वास्थ्य केन्द्रों पर जाने वाले मरीजों की प्रतिशतता अधिक है। सर्वे से स्पष्ट हुआ है कि ग्रामीण क्षेत्रों में 54.7 प्रतिशत आबादी, जबकि शहरी क्षेत्रों में 56.9 प्रतिशत आबादी स्वास्थ्य सेवाओं के लिये निजी अस्पतालों पर ही निर्भर हैं। बीते दशकों में यह प्रतिशतता बढ़ती गयी है।

6.10 निजी स्वास्थ्य सेवा के अवसर एवं लाभ (Scope and Advantages of Private Healthcare)

लोगों के निजी स्वास्थ्य सेक्टर की ओर बढ़ने के कई कारण हैं। सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं की सीमाएं प्रत्यक्ष तौर पर प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं में निजी सेक्टर के बढ़ावे की वजह बनती हैं। स्वास्थ्य सेवाओं में अच्छी गुणवत्ता और सेवाओं के चयन की स्वतंत्रता भी इसका एक कारण है। तुलनात्मक रूप से देखें तो निजी सेक्टर में सार्वजनिक सेक्टर के मुकाबले बेहतर चिकित्सकीय सुविधाएं और सेवाओं की विस्तृत श्रृंखला उपलब्ध है। स्वच्छता, बेहतर ग्राहक सेवाएं भी निजी अस्पतालों की मांग में बढ़ोतरी की वजह है। जबकि सरकारी अस्पतालों में लचर रखरखाव और लोगों से संवाद में नौकरशाही साफ नजर आती है।

निजी अस्पतालों में सेवाएं प्रदान करने में मरीज का लंबे समय तक प्रतीक्षारत नहीं रहना सबसे बड़ी विशेषता है।

दूसरी ओर, उच्च शिक्षण एवं प्रशिक्षण प्राप्त डॉक्टर इसलिये निजी अस्पतालों से जुड़ते हैं कि वहां उन्हें सरकारी अस्पतालों के मुकाबले अधिक लाभ मिलता है। ऐसे उच्च प्रशिक्षित डॉक्टरों की मौजूदगी अपने आप रोगियों को निजी अस्पतालों की ओर खींच ले जाती है। निजी अस्पतालों में विशेषज्ञता, तकनीकी दक्षता भी उपलब्ध होती है। सुपरस्पेशलिटी अस्पतालों में मरीजों की मांग के अनुरूप सुविधाओं की विस्तृत श्रृंखला उपलब्ध रहती है। निजी सेक्टर में रोजगार के नये अवसर भी सृजित होते हैं। इसके अलावा निजी बीमा कंपनियां भी मरीजों की सुविधा के लिहाज से सेवा प्रदानकरती हैं। निजी स्वास्थ्य सेक्टर मांग और उपलब्धता के सिद्धांत पर काम करते हैं, क्योंकि उनका लक्ष्य लाभ कमाना है। कॉरपोरेटों का स्वास्थ्य सेवाओं की ओर बढ़ता रुझान सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं में निवेश को कम करने के साथ खर्चे को बढ़ाने की वजह बन रहा है जो भविष्य में सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं को ध्वस्त करने का कारण बन सकता है। ऐसे में इसके नियमन की आवश्यकता है।

अन्य प्रमुख निजी हितधारक फार्मास्यूटिकल उद्योग और चिकित्सकीय उपकरण निर्माण कंपनियों में जुड़े हैं। भारत को दुनिया का तीसरा सबसे बड़ा फार्मेसी उत्पादों का निर्यातक देश माना जाता है। करीब 80 प्रतिशत दवा बाजार जेनेरिक कम लागत वाली दवाओं का है, जिनकी मांग बेहद अधिक है। सरकार ने इस सेक्टर में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश यानी एफडीआई की भी अनुमति दी है, जिससे भारत में भविष्य में फार्मास्यूटिकल उद्योग में बहुत तेजी से विकास की संभावना है और यह निजी स्वास्थ्य सेवाओं की लागत को भी प्रभावित करने में सक्षम हो सकता है। इसी तरह सरकार ने चिकित्सकीय उपकरणों के आयात और निर्यात पर नियमों, कर में छूट के प्रावधान भी किये हैं। यह सेक्टर भी भविष्य में बढ़ने वाला है। भारत में स्वास्थ्य सेक्टर प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को आकर्षित करने वाला दूसरा सबसे बड़ा सेक्टर है। चिकित्सा पर्यटन भी वह पहलू है, जहां निजी हितधारकों की बड़ी भूमिका है। चिकित्सा पर्यटन को सकल घरेलू उत्पाद का अहम बिन्दु माना जाता है। भारत में दुनियाभर के विकसित देशों, अफ्रीकी, दक्षिणी और पश्चिमी एशियाई देशों के मरीजों के इलाज के लिये आने में भी लगातार वृद्धि हो रही है।

6.11 सार्वजनिक निजी साझेदारी (Public Private Partnership)

सार्वजनिक नीति निर्माताओं की ओर से स्वास्थ्य क्षेत्र में एक अन्य मॉडल को प्रोत्साहित किया गया है, जिसका नाम है सार्वजनिक निजी साझेदारी यानी पब्लिक प्राइवेट पार्टनरशिप या पीपीपी। भारत में नागरिकों की स्वास्थ्य जरूरतों की मांग में निरंतर वृद्धि के चलते किसी एक सेक्टर के लिये सभी तक पहुंच बनाये रखना असंभव हो गया है। निजी सेक्टर के स्वास्थ्य सेवा में बढ़ने से सरकार के लिये ऐसे रास्ते तलाशना आवश्यक हो गया, ताकि निजी सेक्अर को सबके लिये स्वास्थ्य सेवा मुहैया कराने का जरिया बनाया जा सके। पीपीपी मोड इसमें सहायक साबित हुआ है। यह सीमित संसाधनों के बावजूद बढ़ती मांग को पूरा करने में मददगार बना है। गैरसरकारी संस्थाओं के साथ सहयोग–समन्वय से स्वास्थ्य सेवाओं को बेहतर बनाने और सबकी पहुंच के दायरे में लाने में खासी मदद मिली है। लेकिन यहां यह आवश्यक है कि सरकार स्वयं भी सक्रिय सहभागिता बनाये रखे और योजनाओं का सफल संचालन करे। पीपीपी मोड के संचालन के मूल्यांकन के लिये इकाई की व्यवस्था की जाये जो मानकों को पूरा किये जाने, सब तक स्वास्थ्य सेवाओं की पहुंच सुनिश्चित करने का भी काम करे।

6.12 निष्कर्ष (Conclusion)

इस इकाई में हमने विस्तार से जाना है कि स्वास्थ्य सेवाओं के क्षेत्र में प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं का फोकस किस तरह बदला है। अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों, संस्थानों ने मौजूदा स्वास्थ्य सेवाओं को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। प्राथमिक स्वास्थ्य के क्षेत्र में राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति का विकास और विभिन्न कमेटियों का गठन भी इसकी ही देन है। इकाई में हमने पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियों आयुष के बारे में जाना है। इसके अलावा निजी सेक्टर के बढ़ावे, इसके महत्व और पीपीपी मोड के बारे में भी हम जान चुके हैं। निजी सेक्टर के विकास, अवसर एवं लाभ, निजी सेवाप्रदाताओं की कार्यशैली में राज्य के नियंत्रण, चुनौतियों के बारे में भी हमें विस्तार से जानकारी प्राप्त हो सकी है।

6.13 भावी अध्ययन (Further Readings)

- Baru, V Rama (1998) Private Health care in India, Social Characteristics and Trends, Sage Publications, New Delhi
- Sachdeva, D. R (2007), Social Welfare Administration in India, Kitab Mahal, Allahabad
- Indian Health Landscapes under Globalization (2009) Ed Alain Vaguette, Manohar Publishing, New Delhi

इकाई -7

स्वास्थ्य एवं चिकित्सा सुविधाओं की समस्याएं
Problems of Health & Medical Facilities

7.1 उद्देश्य
7.2 परिचय
7.3 भारत में स्वास्थ्य क्षेत्र की समस्याएं और चिंताएं
7.4 जनसंख्या वृद्धि
7.5 ग्रामीण–शहरी असमानता
7.6 स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुंच– सामाजिक असमानता और भेदभाव
7.7 अवस्थापना और प्रशिक्षित चिकित्साकर्मियों का अभाव
7.8 चिकित्सा शोध की गुणवत्ता
7.9 चिकित्सा मूल्य में वृद्धि
7.10 चिकित्सा सुरक्षा का अभाव
7.11 रोगमुक्ति के दृष्टिकोण पर अत्यधिक जोर
7.12 रोगों का दोहरा बोझ
7.13 पोषण की कमी
7.14 पारंपरिक चिकित्सा व्यवस्थाओं की अनदेखी
7.15 निष्कर्ष
7.16 भावी अध्ययन

7.1 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के बाद हम जान सकेंगे कि–

- स्वास्थ्य देखभाल सेक्टर के महत्वपूर्ण मुद्दे
- स्वास्थ्य सेवाओं का क्षेत्रीय और वर्गीय विभाजन, भारत में कौन से स्थान और कौन से लोग सबसे अधिक प्रभावित हैं
- स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध कराने के सन्दर्भ में बढ़ती जनसंख्या
- बीते वर्षों में स्वास्थ्य सेवाओं को वित्तीय निर्धारण और स्वास्थ्य सेवाओं में हमारी प्राथमिकताएं
- अवस्थापना समस्याएं, कौशलयुक्त और प्रशिक्षित कर्मचारियों का अभाव, बढ़ती चिकित्सा लागत, उपचार के दृष्टिकोण, चिकित्सा सुरक्षा, रोगों की प्रकृति और भारत की पारंपरिक चिकित्सा सेवाओं की उपेक्षा

7.2 परिचय (Introduction)

स्वतंत्रता के बाद भारत में स्वास्थ्य सेवाओं के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति हुयी है। स्वतंत्रता के समय 1947 में देश में औसत आयु सिर्फ 32 वर्ष थी, जो वर्ष 2012 तक 65 वर्ष हो गयी थी। चेचक, प्लेग जैसे कई संक्रामक रोगों का या तो उन्मूलन किया जा चुका है, या फिर उनकी स्थिति नियंत्रण में लायी जा चुकी है। क्षयरोग, मलेरिया उन्मूलन के लिये विशेष अभियान चल रहा है, टीकाकरण कार्यक्रमों का संचालन किया जा रहा है। इस सबके बीच भारत में स्वास्थ्य सेवाओं के क्षेत्र में अहम समस्याओं की पहचान और इन पर ध्यान केन्द्रित करना जरूरी है। शिशु मृत्यु दर आज भी अन्य देशों के मुकाबले कहीं अधिक है। प्रति 1000 पर 34 शिशु मृत्यु दर है। वर्ष 2016 की एक रिपोर्ट के अनुसार, भारत में वर्ष 2016 में 84 हजार शिशुओं की मौत हुयी, हालांकि यह वर्ष 2015 के मुकाबले कम थी। वर्ष 2015 में 93 हजार शिशुओं की मृत्यु हुयी थी। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने स्वास्थ्य सूचकांक के लिहाज से भारत को 191 देशों की सूची में 112वें स्थान पर रखा है। इस सूची में बांग्लादेश भी हमसे ऊपर है। LANCET मेडिकल जर्नल द्वारा प्रकाशित Global Burden of Diseases अध्ययन के अनुसार भारत का 195 देशों में 154वां स्थान है। इस अध्ययन रिपोर्ट के अनुसार श्रीलंका, बांग्लादेश, भूटान और नेपाल भारत से आगे हैं और यह रिपोर्ट यह भी बताती है कि क्षयरोग, मधुमेह, गुर्दारोग और हृदयरोग के मामलों में कमी लाने और बेहतर स्वास्थ्य सेवा मुहैया कराने के मामले में भारत काफी पीछे है। यद्यपि स्वतंत्रता के बाद स्वास्थ्य क्षेत्र के कई आयामों में भारत ने बहुत उल्लेखनीय उन्नति की है, लेकिन जब गंभीर रोगों की चिंता की बात आती है तो भारत इस पहलू पर पिछड़ जाता है। इस इकाई में हम स्वास्थ्य सेवा और चिकित्सकीय सुविधाओं से जुड़ी ऐसी ही समस्याओं को समझेंगे।

7.3 भारत में स्वास्थ्य क्षेत्र की समस्याएं और चिंताएं (Problems and Concerns Regarding Health Care sector in India)

गुणवत्तापरक स्वास्थ्य सेवा मुहैया कराने में बढ़ती आबादी बड़ी समस्या है। स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुंच का अभाव और असमानता इस समस्या को और बढ़ाते हैं। स्वास्थ्य सेवाओं के वितरण की जब बात आती है तो शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में भारी अंतर साफ नजर आता है। भारत बड़े पैमाने पर मातृ–शिशु मृत्युदर की समस्या से भी जूझ रहा है। पोषण का अभाव इस समस्या की बड़ी वजह है। इसके अलावा क्षयरोग, मलेरिया, कुष्ठ जैसे संक्रामक रोगों से तो भारत निपट भी नहीं सका है कि कई गैरसंक्रामक रोग भी लगातार बढ़ रहे हैं। इंडिया इंफ्रास्ट्रक्चर रिपोर्ट 2013–14 के अनुसार बीते कुछ दशकों में गैर संक्रामक रोगों का अध्ययन बताता है कि देश में मृत्यु दर बढ़ी है। भारत की रोग रूपरेखा में बदलाव आ रहा है और गैरसंचारी रोगों की वजह से होने वाली मौतों की प्रतिशतता 53 फीसदी हो चुकी है, जिसके वर्ष 2030 तक 67 प्रतिशत होने का अनुमान है।

7.4 जनसंख्या वृद्धि (Population Growth)

सबके स्वास्थ्य की देखभाल की राह में जनसंख्या वृद्धि की उच्च दर लगातार गंभीर चिंता का विषय बनी हुयी है। वर्ष 1952 में भारत में परिवार नियोजन कार्यक्रम प्रारंभ हुआ था। प्रारंभ में यह सिर्फ चिकित्सकीय माध्यमों से गर्भनिरोधन मानकों तक सीमित था, लेकिन बाद में इसमें और सुधार करते हुये मातृ स्वास्थ्य देखभाल, परिवार नियोजन में शिक्षा के महत्व, महिलाओं में जागरूकता, सामुदायिक जागरूकता और प्रोत्साहन, विशेष स्वास्थ्य सेवाओं–सुविधाओं, कर्मचारियों के प्रशिक्षण, शोध एवं मूल्यांकन और स्वयंसेवी संस्थाओं के संयोजन तक इसे विस्तार दिया गया। परिवार नियोजन को बुनियादी मानव अधिकार माना गया है और इसे परिवार कल्याण कार्यक्रम से जोड़ने की आवश्यकता है, ताकि इसके बेहतर परिणाम हासिल किये जा सकें। बढ़ती जनसंख्या भारत में सफाई की समस्या के तौर पर भी चुनौती बनी है। स्वस्थ समुदाय की सुनिश्चितता के लिये अच्छी सफाई और हाईजीन आधारभूत आवश्यकता है। स्वच्छ पानी और सफाई का अभाव आज भी भारत के बड़े हिस्से की समस्या हैं। अनुमान के अनुसार खराब सफाई के चलते भारत को वर्ष 2006 में 54 अरब डॉलर खर्चा करना पड़ा था जो देश की कुल जीडीपी का 6.4 प्रतिशत रहा। इस खर्चे का 70 प्रतिशत हिस्सा यानी 38.5 अरब डॉलर स्वास्थ्य से संबधित था, क्योंकि गंदगी के कारण डायरिया और श्वसन संबंधी संक्रमण कुल स्वास्थ्य समस्याओं का 12 फीसदी हिस्सा रहा।

7.5 ग्रामीण–शहरी असमानता (Rural Urban Disparity)

भारत में 75 प्रतिशत डिस्पेंसरियां, 60 प्रतिशत अस्पताल और 80 फीसदी डॉक्टर शहरी क्षेत्रों में हैं, जबकि इन शहरों में देश की सिर्फ 28 फीसदी आबादी रह रही है। इन आंकड़ों से ही स्पष्ट होता है कि स्वास्थ्य सेवाओं के क्षेत्र में कितनी भारी असमानता है। ग्रामीण आबादी की अस्पतालों तक पहुंच ना के बराबर है, जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में प्रदान की जाने वाली सेवाओं का स्तर और गुणवत्ता भी निम्न है। चिकित्सक और अन्य चिकित्साकर्मी ग्रामीण क्षेत्रों के बजाय शहरों में ही रहना पसंद करते हैं, क्योंकि यह अधिक फायदेमंद है और उनके लिये शहरों में अधिक बेहतर अवसरों की भी उपलब्धता है। सरकार के स्तर पर भी चिकित्साकर्मियों और चिकित्सकों को ग्रामीण क्षेत्रों में तैनाती के लिये प्रोत्साहित करने के मकसद से कोई विशेष अभियान या कार्यक्रम नहीं चलाया गया है। ग्रामीण क्षेत्रों में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों में बढ़ती आबादी की स्वास्थ्य आवश्यकताओं और विशेषज्ञ चिकित्सा देने के लिये आवश्यक संसाधन तक नहीं हैं। इसके चलते ग्रामीण आबादी को इलाज और बेहतर चिकित्सकीय सुविधाएं हासिल करने के लिये शहरी क्षेत्रों की ओर जाना पड़ता है। शहरों में भी उन्हें निजी अस्पतालों में जाना पड़ता है, जो बेहतर इलाज के महंगे दामों

के चलते उन्हें उधार के जाल में फंसा देता है। आंकड़े बताते हैं कि ग्रामीण भारत में सिर्फ 37 प्रतिशत आबादी ऐसी है, जिनके लिये पांच किलोमीटर के दायरे में अस्पताल में भर्ती होने की सुविधा उपलब्ध है। अस्पताल में ओपीडी की सहूलियत 68 फीसदी ग्रामीण आबादी को उपलब्ध है। ब्रिक देशों में भारत में आबादी के अनुपात में डॉक्टरों की संख्या का आंकड़ा न्यूनतम है। यहां प्रति दस हजार आबादी पर सिर्फ एक चिकित्सक उपलब्ध है। स्वास्थ्य समस्याएं और निर्धनता परस्पर गहराई से जुड़ी हुयी हैं। बेहतर स्वास्थ्य सुविधाओं और शिक्षा के बिना भारत निर्धनता के निरंतर चक्र से बाहर नहीं निकल सकता है।

7.6 स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुंच– सामाजिक असमानता और भेदभाव (Access to Health Care: Social Inequality and Discrimination)

शहरी–ग्रामीण असामानता के अलावा भारतीय समाज आज भी सामाजिक भेदभाव, जाति आधारित शोषण की समस्याओं से जूझ रहा है और ये पहलू अकसर स्वास्थ्य सेवा के क्षेत्र में भी उभरकर आते हैं। अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति से जुड़े समुदायों को कई बार बेहतर स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध नहीं हो पातीं। ऐसे भी कई मामले सामने आये हैं, जहां डॉक्टरों ने प्रसव के दौरान गंभीर हालत होने के बावजूद इन समुदायों की महिलाओं को इलाज देने से इनकार कर दिया। एक अध्ययन के अनुसार सर्वेक्षण में शामिल किये गये अनुसूचित जाति के 94 प्रतिशत बच्चों ने माना कि इलाज के दौरान उन्हें अस्पृश्यता का दंश झेलना पड़ा। इसी तरह 93 फीसदी दलित बच्चों को एएनएम और सामुदायिक कार्यकर्ताओं के स्तर पर इस तरह का शोषण झेलना पड़ा, जबकि 59 प्रतिशत बच्चों ने डॉक्टरों के स्तर पर इस तरह के भेदभाव की जानकारी दी। सात फीसदी अनुसूचित जाति और 16.4 प्रतिशत अनुसूचित जाति के लोगों की सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुंच ही नहीं है, यह प्रतिशतता अन्य जातियों के मुकाबले कहीं अधिक है। असमानता के अनुपात की बात करें तो यह अनुसूचित जाति के लिये 1.19 और अनुसूचित जनजाति के लिये 1.19 है, इसका अर्थ यह है कि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लोगों की सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुंच क्रमशः 19 प्रतिशत और 44 प्रतिशत कम है। (Thorat, 2007)

7.7 अवस्थापना और प्रशिक्षित चिकित्साकर्मियों का अभाव (Lack of Infrastructure and Trained Medical Proffessionals)

वर्ष 2017 में केन्द्र सरकार ने संघीय बजट में 2.27 प्रतिशत स्वास्थ्य व्यय निर्धारित किया है। भारत अन्य क्षेत्रों के मुकाबले स्वास्थ्य में बेहद कम खर्चा करता है। यह खर्चा देश के सकल घरेलू उत्पाद का महज 1. 3 प्रतिशत है, जो ब्रिक्स और सार्क देशों के मुकाबले काफी कम है। ब्रिक्स देशों की बात करें तो ब्राजील में स्वास्थ्य क्षेत्र पर जीडीपी का 8.3 प्रतिशत, रूस और अफ्रीका में क्रमशः 8.3 प्रतिशत व 7.1 प्रतिशत खर्च किया जा रहा है। इसी तरह सार्क देशों में अफगानिस्तार का स्वास्थ्य सेवाओं पर व्यय जीडीपी का 8.2 प्रतिशत है, नेपाल 5.8 और मालदीव 13.7 फीसदी व्यय स्वास्थ्य पर कर रहा है। स्वास्थ्य सेवाओं पर बेहद कम व्यय भारत में वर्षों से स्वास्थ्य सेवाओं की निम्न गुणवत्ता का कारण रहा है। स्वास्थ्य सेवा के क्षेत्र में सामने आने वाली अधिकतर समस्याओं के एक या एक से अधिक समाधान तलाशे जा सकते हैं, यदि सार्वजनिक स्वास्थ्य सेक्टर पर खर्चा बढ़ा दिया जाये। लेकिन भारत के बजट में स्वास्थ्य पर होने वाला

व्यय स्पष्ट करता है कि सरकार स्वास्थ्य सेवाओं को राज्य की महत्वपूर्ण जिम्मेदारी नहीं मानती है। सार्वजनिक स्वास्थ्य सेक्टर पर बेहद कम खर्चा स्वतः निजी सेक्टर के स्वास्थ्य सेवा में बढ़ते निवेश की वजह बनता है। सार्वजनिक अस्पतालों में स्वास्थ्य सेवाओं की निम्न गुणवत्ता के चलते लोगों को निजी अस्पतालों में इलाज के लिये मजबूर होना पड़ता है। निजी निवेशक स्वास्थ्य सेवाओं के इस अंतर को समझते हुये बड़े हितधारक के रूप में लगातार बढ़ रहे हैं। जब भी बेहतर और अच्छी स्वास्थ्य सुविधाओं की बात आती है तो लोगों के पास सिवाय निजी स्वास्थ्य सेक्टर में जाने के कोई विकल्प बाकी नहीं रह पाता है। निजी निवेशकों का मूल और मुख्य लक्ष्य लाभ कमाना है, जिसके चलते वे बड़ी आबादी वाले शहरी क्षेत्रों में अस्पताल बना रहे हैं और यह भी ग्रामीण–शहरी विभाजन की वजह बन रहा है। ग्रामीण आबादी को बेहतर इलाज के लिये लंबी दूरी तय करनी पड़ती है और यह भी उन पर आर्थिक बोझ बढ़ने का कारण है। नेशनल सैंपल सर्वे के अनुसार 68 प्रतिशत ग्रामीण आबादी स्वास्थ्य आवश्यकताओं पर होने वाले खर्च की पूर्ति अपनी जमापूंजी से करते हैं, जबकि प्रति चार में से एक व्यक्ति को अस्पतालों में होने वाले खर्च के लिये उधार लेना पड़ता है। सरकार को निजी स्वास्थ्य सेक्टर पर नियंत्रण के लिये सख्त मानक तय करने होंगे, अन्यथा भारतीय आबादी का बड़ा हिस्सा गुणवत्तापरक स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुंच से उपेक्षित रह जायेगा। 'An Uncertain Glory: India and its contradictions' में ड्रेज और सेन (2014) आर्थिक विकास के लिये स्वास्थ्य और शिक्षा के महत्व पर जोर देते हैं। वह बताते हैं कि स्वास्थ्य सेवाओं पर अधिक निवेश भारत के आर्थिक विकास में केन्द्रीय भूमिका का निर्वहन कर सकता है।

अवस्थापना और प्रशिक्षित चिकित्साकर्मियों का अभाव (Lack of Infrastructure and Trained Medical Proffessionals)

स्वास्थ्य सेवाओं पर अल्प व्यय के साथ भारत में स्वास्थ्य अवस्थापना और तकनीकों के विकास पर भी बेहद कम खर्चा किया जा रहा है। मौजूदा अवस्थापना ढांचा लक्ष्य की पूर्ति कर पाने में अक्षम है। नेशनल हेल्थ प्रोफाइल 2017 के अनुसार भारत में एक अरब 30 करोड़ आबादी के लिये सिर्फ दस लाख डॉक्टर हैं, जिनमें से सिर्फ दस प्रतिशत ही सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवा के क्षेत्र में कार्यरत हैं, जबकि इसी सेक्टर पर करीब 90 करोड़ लोगों के स्वास्थ्य उपचार –विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में– का जिम्मा है। वर्ष 2016 में विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट में बताया गया कि ग्रामीण भारत में पांच में से एक ही डॉक्टर चिकित्सकीय कार्य करने के लिये प्रशिक्षण प्राप्त है। खुद को डॉक्टर बताने का दावा करने वाले 31.4 प्रतिशत लोग सिर्फ 12वीं तक पढ़े हुये थे, जबकि 57.3 फीसदी ने कोई चिकित्सकीय प्रशिक्षण नहीं लिया था। ग्रामीण क्षेत्रों में प्रशिक्षित चिकित्सा विशेषज्ञों और पैरामेडिकल स्टाफ का सर्वथा अभाव है। स्वास्थ्य सेवा में एकीकृत श्रमशक्ति का जब तक अभाव रहेगा, इस सेक्टर को नागरिकों के लिये बेहतर बना पाना संभव नहीं है। दूसरी ओर, प्रशिक्षित चिकित्साकर्मियों में ग्रामीण क्षेत्रों में काम करने के प्रति अनिच्छा का भाव रहता है, क्योंकि उन्हें शहरी क्षेत्रों में बेहतर अवसर मिलते हैं। ऐसे में ग्रामीण क्षेत्रों में भी अच्छे अवसर और प्रोत्साहन योजनाओं का संचालन किया जाना जरूरी है, ताकि प्रशिक्षित चिकित्साकर्मियों को वहां जाने के लिये प्रेरित किया जा सके।

7.8 चिकित्सा शोध की गुणवत्ता (Quality of Medical Research)

भारत में चिकित्सा सेवाओं के अत्यधिक बाजारीकरण के चलते चिकित्सा शोध को वर्षों तक दोयम स्तर पर रखा गया। शोधकार्यों को लेकर किसी तरह का उत्साह भी यहां नहीं रहा। (Bajapi, 2014) दूसरी ओर अधिसंख्य चिकित्सा विशेषज्ञों का भी झुकाव निजी सेक्टर की ओर ही अधिक रहता है। प्रारंभ में शोधकार्य करने की अवधारणा के साथ जिस अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान यानी एम्स की स्थापना की गयी, वह भी मरीजों के भारी दबाव से जूझ रहा है और इस वजह से वहां कार्यरत विशेषज्ञों के लिये शोधकार्यों पर ध्यान दे पाना संभव नहीं। एक अनुमान के अनुसार 25 से 30 लाख लोग हर साल नयी दिल्ली स्थित एम्स में इलाज के लिये आते हैं। अधिकतर मरीज दिल्ली से सटे राज्यों के होते हैं, जो बेहतर इलाज की आस में यहां तक पहुंचते हैं। इस समस्या से निपटने के लिये छह नये एम्स की स्थापना और दिल्ली एम्स के विस्तारीकरण का प्रस्ताव तैयार किया गया। लेकिन, यहां यह तथ्य भी अहम है कि समस्या का समाधान सिर्फ अवस्थापना विकास से ही नहीं होगा, मानव संसाधन में वृद्धि भी आवश्यक है। स्थिति यह है कि दिल्ली जैसे स्थान पर भी डॉक्टरों और अन्य चिकित्साकर्मियों का भारी अभाव है। ऐसे में अवस्थापना के साथ मानव संसाधन विकास पर भी ध्यान देने की जरूरत है। स्वास्थ्य सेवाओं के लिये जारी होने वाला न्यून बजट भी भारत में चिकित्सा शोधों की कमजोरी का कारण है। निवेश के लिहाज से शोधकार्यों के लिये दी जाने वाली रकम को गैरलाभकारी माना जाता है। इसके अलावा ब्यूरोक्रेसी में भाई–भतीजावाद और भ्रष्टाचार भी विकास को पीछे कर देता है।

7.9 चिकित्सा मूल्य में वृद्धि (Rises in Medical Cost)

आधुनिक और विशेषज्ञ चिकित्सा के लिये ग्रामीण क्षेत्रों के लोग शहरों की ओर जाते हैं। भारत में ग्रामीण क्षेत्रों की बड़ी आबादी एम्स जैसे संस्थानों पर निर्भर है, लेकिन वहां मरीजों के भारी दबाव और त्वरित उपचार के अभाव के चलते उन्हें मजबूरन निजी अस्पतालों में जाना पड़ता है। एक अनुमान के अनुसार भारत में प्रतिवर्ष चार करोड़ के करीब लोग चिकित्सा लागत की वजह से निर्धनता से घिर जाते हैं। वर्तमान में भारत में स्वास्थ्य सेवाओं पर होने वाले खर्च का 80 प्रतिशत हिस्सा निजी सेक्टर को मिलता है, इसी तरह देश के अस्पतालों में भर्ती होने वाले मरीजों में से भी 60 प्रतिशत निजी अस्पतालों में होते हैं। यह आंकड़ा सरकार के असमान वितरण का प्रमाण है कि भारत में इलाज पर होने वाला खर्चा स्वास्थ्य सेवाओं पर किये जाने वाले व्यय के 85 प्रतिशत के बराबर है, यह दुनिया में सर्वाधिक है। 1999–2000 की रिपोर्ट के अनुसार चिकित्सा लागत की वजह से निर्धनता की प्रतिशतता 3.7 से बढ़कर 12 फीसदी हो गयी है (Ghosh, 2010). भारतीय फार्मास्यूटिकल उद्योगों ने बीते कुछ साल में खासी प्रगति की है। पांच साल से यह क्षेत्र प्रतिवर्ष 13 से 14 प्रतिशत की दर से विकसित हो रहा है। गैरसंचारी रोगों में बढ़ोतरी स्वास्थ्य सेवाओं में तेज सुधार की ओर इशारा करती है साथ ही नयी कम लागत की दवाओं के लिये शोध और विकास की भी आवश्यकता है। यानी फार्मास्यूटिकल उद्योगों की प्रगति का लाभ लागत कम करने और दवाओं की उपलब्धता बढ़ाने की दिशा में मिलना चाहिये। इसके लिये भारत सरकार का फार्मास्यूटिकल उद्योगों के विकास के लिये सुविधाएं प्रदान करने के साथ दवाओं के मूल्य और उपलब्धता पर भी ध्यान देना जरूरी है। यहां इस बात पर ध्यान केन्द्रित किया जाना चाहिये कि सबको गुणवत्तापरक और बेहतर चिकित्सा सेवा उपलब्ध करायी जा सके।

7.10 चिकित्सा सुरक्षा का अभाव (Absence of Medical Insurance)

विश्व बैंक की रिपोर्ट के अनुसार भारत में सिर्फ पांच प्रतिशत आबादी ही स्वास्थ्य बीमा योजनाओ से जुड़े हुये हैं। ऐसे में चिकित्सा पर होने वाला खर्चा सीधे जेब से जाता है। स्वास्थ्य बीमा का बाजार भी अधिकतर शहरी, मध्य या उच्च आय वर्ग तक सीमित है। वर्ष 2008 में भारत सरकार ने प्रायोगिक तौर पर राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना लागू की, लेकिन मजबूत सार्वजनिक बीमा योजना नहीं दे सकी। इस योजना के तहत सिर्फ गरीबी रेखा से नीचे यानी बीपीएल परिवार ही योग्य थे। लाभार्थियों को पंजीकरण के समय 30 रुपये का भुगतान करना होता था, जबकि बाकी रकम राज्य और केन्द्र सरकार द्वारा दी जाती थी। लेकिन, अधिकतर लाभार्थियों को ही इस कार्यक्रम की जानकारी नहीं है ऐसे में जागरूकता अभियान बेहद जरूरी है, ताकि अधिक से अधिक लोगों को योजना से जोड़ा जा सके। इस योजना की एक सबसे बड़ी कमी यह थी कि इसके तहत ओपीडी पर होने वाले खर्चे का भुगतान नहीं किया जाता, जबकि अधिकतर निर्धन परिवारों के लोग इसलिये भर्ती नहीं होना चाहते कि उनकी दिहाड़ी बंद हो जायेगी। इस तरह की योजनाओं को प्रभावी बनाने के लिये ढांचागत स्तर पर काफी सुधारों की आवश्यकता है, साथ ही ऐसी नयी बीमा योजनाओं का भी संचालन किया जाना जरूरी है।[8]

7.11 रोगनिवारण के दृष्टिकोण पर अत्यधिक जोर (Overemphasis on Curative Approach)

रोगनिवारण पर जरूरत से अधिक जोर दिये जाने के कारण भारत में स्वास्थ्य सेवाओं की व्यवस्था को गहरा नुकसान हुआ है। रोगनिवारक दृष्टिकोण सिर्फ रोग से निजात दिलाने पर ध्यान केन्द्रित करता है और संरक्षात्मक या शमनात्मक उपचार पर ध्यान नहीं देता। भारत में प्राथमिक स्वास्थ्य के क्षेत्र में होने वाले कुल व्यय का 85 प्रतिशत हिस्सा सिर्फ रोगनिवारण पर खर्च होता है, जबकि संरक्षात्मक कार्यक्रमों के लिये मात्र 15 फीसदी ही हिस्सा रखा जाता है। बड़े आधुनिक अस्पताल भी सिर्फ रोगों से मुक्ति दिलाने वाले संस्थान के तौर पर काम करते हैं और लोगों के विस्तृत सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक सन्दर्भों से उनका कोई जुड़ाव नहीं होता है, जबकि यही वे तत्व हैं जो बड़े पैमाने पर लोगों के स्वास्थ्य जीवन को प्रभावित करते हैं। दुर्भाग्य से रोगनिवारण की यह व्यवस्था भी अधिकतर आम लोगों की पहुंच से बाहर हो गयी है, जिसकी वजह स्वास्थ्य सेवाओं को संचालित करने वाली नीतियों और कार्यढांचे का लचर होना है। (Bajpai: 2014) हमारी सार्वजनिक स्वास्थ्य नीतियां भी रोगनिवारण की ओर ही अधिक झुकाव रखती हैं, जिसमें डॉक्टर, पैरामेडिकल कर्मियों, अस्पतालों, फार्मास्यूटिकल कंपनियों की अहम भूमिका रहती है। यह पूरी व्यवस्था जेब से होने वाले खर्चे पर निर्भर है और समाज के निर्धन वर्ग को विकल्पहीन छोड़ देती है। इतना ही नहीं, यह नीतियां लोगों को निर्धनता के साथ स्वास्थ्य सेवाओं के अधिकार की सुरक्षा और पहुंच से भी दूर करती हैं। ऐसे में यह जरूरी लगता है कि नीतियों को पुनर्निर्धारित किया जाये और इस तरह तैयार किया जाये कि वे स्वास्थ्य के सभी पहलू– रोगनिवारण, संरक्षा और शमन पर काम करें। यहां संरक्षात्मक पहलू पर और अधिक ध्यान दिये जाने की जरूरत है, जिसके तहत रोगों के प्रति सामुदायिक जागरूकता, साफ–सफाई और शुद्ध पानी को लेकर सजगता, नियमित स्वास्थ्य चेकअप आदि होने चाहिये। इस काम में स्वयंसेवी संस्थाओं की भूमिका, सरकारी एजेंसियों के सशक्तीकरण और समुदाय से बेहतर संचार की आवश्यकता होगी। स्वास्थ्य सेवाओं को समग्र बनाने के लिये चिकित्सा और देखभाल से जुड़े सभी दृष्टिकोणों को एकीकृत किया जाना चाहिये।

7.12 रोगों का दोहरा बोझ (Twin Burden of Diseases)

भारत संचारी रोगों और गैरसंचारी रोगों का दोहरा दबाव झेल रहा है। संचारी रोग का अर्थ मुख्यतः संक्रामक रोगों से है, जैसे– क्षयरोग, हैजा आदि और गैरसंचारी रोग तीव्र, अपक्षयी और स्थायी रोग शामिल हैं, जैसे– कार्डियोवस्कुलर, हाइपर टेंशन, कैंसर आदि। संक्रामक रोग अब भी लगातार सामने आते हैं, क्योंकि भारत में सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं का स्तर बेहद कमजोर है। गरीबी भी इसका एक कारण है। वहीं, गैर संक्रामक रोगों में बढ़ोतरी की वजह जीवनशैली में बदलाव, जनसांख्यिकीय आंकड़ों में बदलाव और औसत आयु में वृद्धि है। विश्व स्वास्थ्य संगठन की वर्ष 2012 की रिपोर्ट के अनुसार भारत में होने वाली कुल मौतों में से 53 फीसदी का कारण गैर संक्रामक रोग हैं। एक अन्य अध्ययन इंडिया इंफ्रास्ट्रक्चर रिपोर्ट 2013–14 के अनुसार बीते कुछ दशकों में भारत में मृत्यु के कारणों में बदलाव आया है और अब कुल मृत्यु का 53 प्रतिशत कारण गैर संक्रामक रोग हैं, जिसके 2037 तक बढ़कर 67 प्रतिशत हो जाने की आशंका है (Mohan, 2013-14). यह आंकड़े इसलिये चौंकाने वाले हैं क्योंकि वैश्विक रोग भार का 21 प्रतिशत हिस्सा भारत का है।

उदाहरण के लिये, विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार वर्ष 2012 में प्रतिवर्ष कैंसररोगियों की संख्या 14 लाख थी जो अगले दो दशकों में बढ़कर 22 लाख होने का अनुमान है। इसी तरह कैंसर पर GLOBCAN की ओर से किये गये अंतर्राष्ट्रीय अध्ययन के अनुसार भारत में अगले बीस साल में कैंसर के मामलों की संख्या 10 लाख से बढ़कर 2035 तक 17 लाख होने का अनुमान है, यानी कैंसर के कारण भारत में होने वाली मौतों के आंकड़े में भी इसी अनुपात में वृद्धि होगी। हृदयरोग के बाद कैंसर भारत में बीमारियों से होने वाली मौतों का दूसरा सबसे बड़ा कारण है। 'Cancer mortality in India' अध्ययन के तहत शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में कैंसर से होने वाली मौतों का तुलनात्मक अध्ययन किया गया और आश्चर्यजनक रूप से अध्ययन के आंकड़ों ने इस धारणा को ध्वस्त किया कि शहरों में कैंसर के अधिक रोगी होते हैं। रिपोर्ट के अनुसार भारत के शहरों और गांवों में समान रूप से कैंसररोगी पाये गये। ऐसे में यह बड़ी चुनौती है कि भारतीय सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवा को इन समस्याओं से निपटने लायक कैसे बनाया जाये। इसके लिये जरूरी है कि मौजूदा स्थिति की व्यवस्थित समीक्षा की जाये और तदनुकूल नीतियों का निर्माण करते हुये ऐसे कानूनी तंत्र को भी विकसित किया जाये जो इन मुद्दों की निगरानी कर सके, अन्यथा हमें संक्रामक और गैर संक्रामक दोनों तरह के रोगों को महामारी की तरह झेलना पड़ सकता है।

7.13 पोषण की कमी (Nutritional Deficiencies)

पोषण की कमी एक ऐसा जटिल मुद्दा है जो न सिर्फ पर्याप्त और संतुलित भोजन के अभाव से जुड़ा है, बल्कि कई अन्य सामाजिक–आर्थिक मसले भी इसमें शामिल हैं। अच्छे स्वास्थ्य के लिये कई बुनियादी पोषण आवश्यक हैं, जिनमें विटामिन, खनिज, कैल्शियम, आयरन, मैग्नीशियम, पोटेशियम, सोडियम आदि शामिल हैं। इनके अलावा जिंक, आयोडीन, फ्लोराइड भी आवश्यक हैं। आवश्यक पोषण के अभाव में शरीर में स्वास्थ्य अपक्षय होने लगता है जो बच्चों और वयस्कों में कई बीमारियों और मौत का कारण बनता है। अधिकतर पोषक तत्व हमें सीधे भोजन से मिल जाते हैं। लेकिन भारत में विशेषतौर पर महिलाओं और बच्चों में कुपोषण की चुनौती बरकरार है। ऐसे में मिड डे मील, किशोरियों, गर्भवतियों और अन्य महिलाओं के लिये पोषण कार्यक्रम की इस चुनौती से निपटने में अहम भूमिका है। केन्द्र सरकार द्वारा संचालित कुछ पोषण योजनाओं में, एकीकृत बाल विकास योजना, मिड डे मील योजना, विशेष पोषण कार्यक्रम, गेहूं आधारित

पोषण कार्यक्रम, बालवाड़ी पोषण कार्यक्रम, राष्ट्रीय पोषण एवं एनीमिया रोधी कार्यक्रम, राष्ट्रीय अंधता (विटामिन ए की कमी के कारण) निवारण कार्यक्रम, राष्ट्रीय घेंघा रोग निवारण कायक्रम आदि शामिल हैं।

7.14 पारंपरिक चिकित्सा व्यवस्थाओं की अनदेखी (Negligence of Traditional Medical Systems)

भारत में पारंपरिक चिकित्सा व्यवस्थाएं स्वास्थ्य आवश्यकताओं को पूर्ण करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती रही हैं और उनमें भविष्य में भी यह भूमिका निभाने की पूरी क्षमता है। 'चिकित्सा की वे व्यवस्थाएं जिनका जन्म भारत में हुआ अथवा वे व्यवस्थाएं जो बाहरी देशों से भारत में आयीं और फिर भारतीय संस्कृति का ही अभिन्न हिस्सा बन गयीं, भारतीय पारंपरिक चिकित्सा कहलाती हैं। यह भारत की अद्वितीय विशिष्टता है कि यहां इस श्रेणी में छह चिरपरिचित व्यवस्थाएं मौजूद हैं। इनके नाम हैं, आयुर्वेद, योग, सिद्ध, यूनानी, होम्योपैथी और नेचरोपैथी। इनके अलावा लोकसमाज की धारा में भी बड़ी संख्या में उपचारक मौजूद हैं जिन्हें इस श्रेणी में शामिल नहीं किया गया है।' (Prasad, 2002). इन पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियों मुख्यधारा में लाने के लिये आयुष (आयुर्वेद, योग, नेचरोपैथी, यूनानी, सिद्ध, होम्योपैथी और तिब्बती चिकित्सा परंपरा सोवा–रिग्पा) मंत्रालय का गठन किया गया है। इसका लक्ष्य इन पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियों को वैकल्पिक चिकित्सा व्यवस्था के तौर पर विकसित करने के साथ इनमें शोधकार्यों को बढ़ावा देना है, ताकि ये व्यवस्थाएं भारत के शहरी और ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में स्वास्थ्य मांगों की पूर्ति करने में सक्षम हो सकें। स्वास्थ्य नीति को भी एकीकृत किये जाने की जरूरत है।

7.15 निष्कर्ष (Conclusion)

उपरोक्त भारतीय स्वास्थ्य सेवा की बुनियादी समस्याएं हैं, लेकिन इनके अलावा भी विभिन्न स्तरों पर कई चुनौतियां मौजूद हैं। भारत में स्वास्थ्य सेवाओं को मौजूदा सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवा व्यवस्था की कमजोरी से लगातार चुनौती मिलती है, जिसके चलते भविष्य के लिये भी बोझ बढ़ने की आशंका है। ऐसे में स्वास्थ्य नीतियों पर विशेष ध्यान देने की जरूरत है ताकि इन सभी चुनौतियों और समस्याओं को दूर करते हुये बेहतर शुरुआत की जा सके। केन्द्र सरकार को स्वास्थ्य क्षेत्र में बजट बढ़ाने की आवश्यकता है। समग्र राष्ट्रीय विकास के लिये शिक्षा के विकास, लैंगिक समानता की दिशा में प्रयास, आर्थिक विकास के साथ बेहतर स्वास्थ्य स्थिति के विकास के लिये विशेष अभियान चलाये जाने की जरूरत है।

7.16 भावी अध्ययन (Further Readings)

1.
2. Acharya, S.S. (2010). Access to Health Care and Patterns of Discrimination: Study of Dalit Children in Selected Villages of Gujarat and Rajasthan. New Delhi: IIDS & UNICEF, p.16.

3. Bajpai, Vikas (2014) The Challenges Confronting Public Hospitals in India, Their Origins, and Possible Solutions, Advances in Public Health, Volume 2014

4. Ghosh, Jayati*; Poverty Reduction in China and India: Policy Implications of Recent Trents*, DESA Working Paper no.92, January 2010.

5. Kumar, G. S., Kar, S. S., & Jain, A. (2011). Health and environmental sanitation in India: Issues for prioritizing control strategies. *Indian Journal of Occupational and Environmental Medicine*

6. Sujatha, V & Abraham, Leena (eds). 2012, Medical Pluralism in Contemporary India, Introduction , Orient Black Swan, Hyderabad

7. Thorat et.al. (2007) Human Poverty and Socially Disadvantaged groups in India, UNDP.

इकाई -8

सार्वजनिक–निजी साझेदारी

PPP (Public-Private Partnership)

8.1 उद्देश्य
8.2 परिचय
8.3 स्वास्थ्य सेवा प्रदाता के तौर पर राज्य की भूमिका
8.4 सार्वजनिक–निजी साझेदारी के प्रकार
8.5 साझेदारी में हितधारकों की भूमिका
8.6 पीपीपी के लाभ एवं सीमाएं
8.7 विभिन्न देशों में पीपीपी
8.8 निष्कर्ष
8.9 भावी अध्ययन

8.1 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के बाद हम जान सकेंगे–

- सार्वजनिक–निजी साझेदारी का अर्थ क्या है और इसके कार्यक्षेत्र क्या हैं?

- **पीपीपी में राज्य की बदलती भूमिका और प्रकृति**
- **पीपीपी के विभिन्न प्रकार और इसकी कार्यप्रणाली**
- **पीपीपी में हितधारकों की भूमिका**
- **यूरोप, अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया, अफ्रीका और एषिया के अन्य देषों में पीपीपी के मौजूदा मॉडल**

8.2 परिचय (Introduction)

स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय ने सार्वजनिक–निजी साझेदारी को सार्वजनिक और निजी सेक्टर के संयुक्त सहयोगी प्रयासों के तौर पर परिभाषित किया है, जिसमें साझेदारी के ढांचे की स्पष्ट पहचान होती है, उद्देश्यों को साझा किया जाता है और स्वास्थ्य सेवाओं के निष्पादन के लिये विशिष्ट मानकों का पालन किया जाता है। 1978 के अल्मा आता घोषणा में वर्ष 2000 (फिर वर्ष 2020) तक सबके लिये प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा का लक्ष्य हासिल करने के लिये स्वास्थ्य सेवा के क्षेत्र में स्वयंसेवियों और निजी सेक्टर को शामिल करने पर जोर दिया गया। भारत में स्वास्थ्य सेवा के क्षेत्र में स्वयंसेवा की लंबी परंपरा रही है। सदियों से पारंपरिक उपचारक अपने–अपने समुदाय में लोगों की स्वास्थ्य आवश्यकताओं की पूर्ति करते रहे हैं। स्वास्थ्य के क्षेत्र में स्वतंत्रतापूर्व काल में सरकार ने निजी सेक्टर को स्वास्थ्य सेवा सुविधाएं उपलब्ध कराने में सहयोग किया, जिसके बदले में निर्धन वर्ग के लिये कुछ सुविधाएं निःशुल्क अथवा नाममात्र के शुल्क पर उपलब्ध करायी गयीं। आयुर्वेद, सिद्ध, नेचरोपैथी, योग आदि पारंपरिक चिकित्सा व्यवस्थाएं भारत में प्राचीनकाल से ही समृद्ध थीं और पीढ़ी दर पीढ़ी ये संचालित होती रहीं। लेकिन औपनिवेशिक दौर में इन पारंपरिक व्यवस्थाओं की अनदेखी करते हुये पश्चिमी चिकित्सा व्यवस्था को महत्व दिया गया। इसे वैज्ञानिक और अन्य सभी चिकित्सा व्यवस्थाओं से सर्वोपरि माना गया। ऐसी स्वास्थ्य व्यवस्था को विकसित करने के प्रयास नहीं किये गये, जिसमें दोनों दुनिया की श्रेष्ठ व्यवस्थाओं को मिलाया जा सके। स्वतंत्रता के बाद भी साठ के दशक तक स्वयंसेवी स्वास्थ्य सेवाएं मात्र अस्पतालों तक सीमित रहीं, जिनका संचालन धार्मिक संस्थाओं या समृद्ध परिवारों द्वारा समाजसेवा के तौर पर किया जाता था। भारतीय स्वास्थ्य व्यवस्था 1970 की प्रगतिशीलता से 1980 के दशक के अंत और 90 के प्रारंभ तक आते–आते स्थिर विकासहीनता तक आ गयीं। 1992 में स्वास्थ्य सेवाओं के क्षेत्र में निजी सेक्टर को बढ़ावा देने के सुझाव विभिन्न योजना दस्तावेजों, कमेटियों की रिपोर्ट और कई एजेंसियों की ओर से दिया गया।

8.3 स्वास्थ्य सेवा प्रदाता के तौर पर राज्य की भूमिका (Role of State as Health Provider)

एक कल्याणकारी राज्य के रूप में भारत बुनियादी मानवीय अधिकारों स्वास्थ्य, शिक्षा, रोजगार प्रदान करता है। कल्याणकारी राज्य की अवधारणा 19वीं सदी में सामाजिक लोकतंत्र के सिद्धांत से उभरी, लेकिन विश्व पर इसका प्रभाव 20वीं सदी में देखा गया, विशेष रूप से 1930 में द्वितीय विश्वयुद्ध की समाप्ति के बाद उपजे अवसाद ने राज्य और नागरिकों के प्रति राज्य के उत्तरदायित्वों को पुनर्स्थापित, पुनर्निधारित किया। इससे पूर्व ब्रिग्स के अनुसार कल्याणकारी राज्य की परिभाषा यह थी कि– वह राज्य जहां शक्तियों को बाजार की ताकतों की भूमिका को तीन दिशाओं (न्यूनतम आय की गारंटी, असुरक्षा की भावना को कम करना और सभी नागरिकों के लिये सामाजिक सेवाओं की विस्तृत श्रृंखला उपलब्ध कराना) में मोड़ने में प्रयोग किया जाता है, वह कल्याणकारी राज्य है। ब्रिग्स (1961) के अनुसार कल्याणकारी राज्य की बुनियाद नागरिकों की समानता के सिद्धांत में छिपी है। आधुनिक कल्याणकारी राज्य का लक्ष्य निर्धनता उन्मूलन,

सामाजिक संतुलन और समन्वय तथा खुशियों की सुनिश्चितता है। कल्याणकारी राज्य के रूप में भारत सामाजिक कल्याण के लिये विस्तृत एवं विविध कार्यक्रमों का संचालन करता है। पंचवर्षीय योजनाओं और विभिन्न सामाजिक सुरक्षा मानकों के जरिये यह स्वायत्त से लेकर विश्वव्यापी कल्याणकारी मॉडलों तक अपनी योजनाओं और कार्यक्रमों में बदलाव करता रहा है। यद्यपि सभी कार्यक्रम सार्वभौमिक नहीं हैं, लेकिन शिक्षा एवं स्वास्थ्य इसके प्रमुख उदाहरण हैं। स्वास्थ्य सेवाएं समाजशास्त्रीय मूल्यों पर आधारित थीं, जिनकी बुनियाद सार्वभौमिक कल्याण प्रणाली रही। स्वास्थ्य सेवा–सुविधाएं प्रदान करने वाले प्रथम स्रोत के रूप में राज्य की प्रमुख चिंता सेवाप्रदान क्षेत्र में अधिकतम विस्तार की रहती है, जहां अधिकतम लोगों को गुणवत्तापरक वस्तुएं और सेवाएं उपलब्ध करायी जा सकें। भारत जैसे विशाल देश में सार्वभौमिक स्वास्थ्य कार्यक्रम का संचालन काल्पनिक लगता है, क्योंकि यहां की आबादी में सांस्कृतिक और सामाजिक विभिन्नताएं–विविधताएं पायी जाती हैं। 1991 से सकल घरेलू उत्पाद में सार्वजनिक स्वास्थ्य पर व्यय की प्रतिशतता या तो स्थिर रही या घटती गयी। निजी सेक्टर के लिये निवेश और बाजार खोल दिया गया। स्वास्थ्य समाज और मानव का महत्वपूर्ण सामाजिक–आर्थिक पैमाना है। यह जन्म–मृत्यु दर, शिशु मृत्यु दर, मातृ मृत्यु दर, लिंगानुपात, औसत आयु जैसे बिंदुओं से सीधे संबद्ध है। स्वास्थ्य को लेकर लोगों की राज्य पर निर्भरता कम होना आर्थिक विकास को गति देने वाला माना जाता है। इन सभी कारणों को देखते हुये स्वास्थ्य सेवाओं में निजी सेक्टर को बढ़ावा दिया गया।

बीते दो दशकों में विभिन्न राज्य सरकारों ने मेडिकल कॉलेजों की स्थापना, सुपर स्पेशलिटी अस्पतालों के निर्माण में निजी सेक्टर को टैक्स में छूट, सब्सिडी पर जमीनों की उपलब्धता, चिकित्सा उपकरणों के आयात में छूट, निजी कंपनियों से दवाएं लेने की स्वतंत्रता, मेडिकल रिकॉर्ड के कंप्यूटरीकरण और एंबुलेंस ऑपरेटरों की संबद्धता आदि में सहायता की (Raman & Bjorkman, 2009). सार्वजनिक–निजी साझेदारी का सामान्य अर्थ सरकारी सेक्टर और निजी सेक्टर के साथ आने से है, जिसके तहत सभी गैर सरकारी संस्थाए जैसे स्वयंसेवी संगठन, कॉरपोरेट सेक्टर, स्वयं सहायता समूह, साझेदारी फर्म, व्यक्तिगत या समुदाय आधारित संगठन मौजूदा सार्वजनिक स्वास्थ्य व्यवस्था को मजबूत करने का काम करते हैं। यह दो पक्षों के बीच स्पष्ट शर्तों के आधार पर विशेष उद्देश्यों की पूर्ति के लिये किया जाने वाला संयुक्त प्रयास है। यहां सरकार की भूमिका केन्द्रीय होती है, क्योंकि यह मानकों और तंत्र का निर्माण करती है जो सेवप्रदाताओं की गुणवत्ता को नियंत्रित करते हैं। इसके अलावा तकनीकी क्षमताओं का निर्माण, बजट उपलब्ध कराना, नीतियों के विकास और सूचनाओं के आदान–प्रदान के लिये हितधारकों से संपर्क करना भी सरकार का काम है।

8.4 सार्वजनिक–निजी साझेदारी के प्रकार (Types of Public-Private Partnership)

पीपीपी के कई प्रंकार हैं, जिनमें अनुबंध, बाहरी संविदा, वाउचर योजना, सामुदायिक स्वास्थ्य बीमा, स्वायत्त अस्पताल और सार्वजनिक–निजी मिश्रण शामिल हैं। अनुबंध या करार स्वास्थ्य सेवा के क्षेत्र में उपयोग किया जाने वाला पीपीपी का सबसे प्रमुख मॉडल है। इसके तहत भी अनुबंध, बाहरी संविदा, कार्य और प्रबंधन करार, सेवा अनुबंध आदि आते हैं। हर तरह की स्थापना की अलग और विविध मांग व जरूरतें होती हैं, ऐसे में जरूरत के हिसाब से ही मॉडल का चयन किया जाता है। उदाहरण के लिये, किसी को सेवाओं में बढ़ोतरी की आवश्यकता हो सकती है तो किसी को अवस्थापना में सुधार की जरूरत होती है। पीपीपी के कुछ प्रमुख प्रकार निम्नवत हैं:

- **अनुबंध संविदाः** सरकार कुछ लोगों को अल्पकाल के लिये अस्थायी रूप से नियुक्ति देती है, जिसे अनुबंध संविदा कहा जाता है। उदाहरण के लिये, डॉक्टरों, नर्सों, तकनीशियनों और अन्य स्टाफ को निर्धारित समय के लिये ही नियुक्ति दी जाती है। इस अनुबंध का इस्तेमाल मुख्यतः खाली पदों को अस्थायी रूप से भरने के लिये किया जाता है। स्वास्थ्य सेवा के क्षेत्र में इस मॉडल की सीमा यह है कि ग्रामीण और दूरस्थ क्षेत्रों में इसका लाभ नहीं मिल पाता, क्योंकि ऐसे क्षेत्रों में नियुक्ति के लिये कोई जल्दी से तैयार नहीं होता है।
- **बाहरी संविदाः** बाहरी व्यक्ति या कंपनी को अनुबंध के आधार पर किसी विशेष कार्य के निष्पादन और प्रबंधन का दायित्व सौंप दिया जाता है। इस तरह के अनुबंध के कई स्तर हैं और यह इस पर निर्भर करता है कि सेवाप्रदाता को कितनी स्वायत्तता दी जाती है। स्तर 1: भौतिक अवस्थापना, उपकरण, बजट और स्वास्थ्य इकाई में कार्यरत लोगों को निजी संगठन को सौंप दी जाती है, स्तर 2: सरकार भौतिक अवस्थापना, उपकरण और बजट निजी संगठन को सौंप देती है और उसे यह विकल्प दिया जाता है कि वह अपनी शर्तों के आधार पर लेकिन सरकार के मानकों के अनुरूप नियुक्ति कर सके, स्तर 3: सरकार भौतिक अवस्थापना, बजट, उपकरण निजी संगठन को सौंपने के साथ उसे यह स्वतंत्रता भी प्रदान करती है कि वह स्वयं नियुक्ति कर सके और स्वास्थ्य सेवा प्रदान करने के लिये अपने मॉडल पर काम करे, उसे सेवाओं के विस्तार, शुल्क निर्धारण और लागत के कुछ हिस्से को वसूलने की भी स्वतंत्रता दी जाती है।
- **वाउचर व्यवस्थाः** यह कूपन व्यवस्था भी कहा जा सकता है, जिसके तहत कूपन या वाउचर को निश्चित वस्तुओं या सेवाओं के बदले भुगतान के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। यह वाउचर परामर्श, प्रयोगशाला जांच, स्वास्थ्य सेवा प्रक्रियाओं, दवाओं, मान्यता प्राप्त अस्पतालों, क्लीनिक और संस्थाओं में सेवा के बदले हासिल किया जाता है। लेकिन संबंधित संस्थानों और संगठनों के लिये गुणवत्ता के मानकों को बनाये रखना आवश्यक होता है। ऐसा नहीं करने पर सरकार या सरकारी एजेंसी की ओर से मिलने वाला अनुदान, भुगतान और मान्यता रद्द की जा सकती है।
- **मोबाइल स्वास्थ्य योजनाः** इस तरह की योजनाएं दूरस्थ और ग्रामीण क्षेत्रों में या ऐसे इलाकों में जहां बुनियादी सुविधाएं देना मुश्किल हो जाता है, वहां स्वास्थ्य सेवाएं प्रदान करने के लिये चलायी जाती हैं। इसके तहत निजी सेक्टर की ओर से परिवहन सुविधा दी जाती हैं, जबकि डॉक्टर और दवाएं सरकार की ओर से दी जाती हैं। कुछ मामलों में निजी संगठनों की ओर से मोबाइल यूनिट दान की जाती है। मुख्य उद्देश्य उन नागरिकों (उदाहरण के लिये बुजुर्ग लोग और गर्भवती महिलाएं) के लिये स्वास्थ्य सेवाओं की पहुंच में सुधार करना है, जो अस्पताल तक पहुंच पाने में अक्षमता, स्थान विशेष की दुर्गम परिस्थितियों और सुविधाओं के अभाव से जूझते हैं। उत्तराखंड में मोबाइल स्वास्थ्य योजना इसका उदाहरण है, जिसके तहत वैन में रेडियोलॉजी जांच उपकरण, विशेष जांच किट आदि रखे गये हैं। यह वैन अपनी निर्धारित सीमा में जगह–जगह जाकर स्वास्थ्य शिविर लगाती हैं। वैन और इसमें लगे उपकरण एक संघीय एजेंसी द्वारा तकनीकी दक्षता प्रोजेक्ट के तहत दिये गये, जबकि एक स्थानीय निजी शोध संस्थान मोबाइल वैन के संचालन, प्रबंधन, कर्मचारियों और उपकरणों की मरम्मत का जिम्मा संभालता है। राज्य सरकार इस योजना के लिये कर्मचारियों, बजट, दवाओं और अन्य सप्लाई करती है। इस सेवा को सचल चिकित्सा वाहन नाम से जाना जाता है।

- **टेलीमेडिसिन परियोजनाः** टेलीमेडिसिन कां अर्थ सूचना–संचार के लिये इलेक्ट्रॉनिक तकनीकों के इस्तेमाल के जरिये ऐसे स्थानों तक स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध कराने से है, जो सेवा प्रदाता से काफी दूर हैं। टेली एक ग्रीक शब्द है, जिसका अर्थ है दूरी और मेडेरी लैटिन शब्द है, जिसका अर्थ उपचार से है। टेलीमेडिसिन के कार्यों की विस्तृत श्रृंखला है, जिनमें शिक्षा, शोध, प्रशासन और जनस्वास्थ्य शामिल हैं। इसमें यह क्षमता भी है कि यह शहरी क्षेत्रों से ग्रामीण दूरस्थ क्षेत्रों के अंतर को पाट सके, क्योंकि दूरी ही ग्रामीण क्षेत्रों में विशेषज्ञ चिकित्सा सेवा की राह में बाधा बनती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने टेलीमेडिसिन को इस तरह परिभाषित किया है, 'स्वास्थ्य सुविधाओं का ऐसे क्षेत्रों में वितरण, जहां दूरी महत्वपूर्ण कारक है। इसमें सभी स्वास्थ्य विशेषज्ञ सूचनाओं और संचार तकनीकों का इस्तेमाल करके रोग व चोटों के परीक्षण, उपचार एवं संरक्षा के संबंध में मानक जानकारियां देते हैं। इसके अलावा स्वास्थ्य सेवाप्रदाताओं के लिये शोध और शिक्षा के मूल्यांकन का भी यह साधन है। कुल मिलाकर इसका मकसद व्यक्तियों और उनके समुदायों के स्वास्थ्य को बेहतर करना है।'
- **समुदाय आधारित स्वास्थ्य बीमाः** सरकार गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले लोगों के स्वास्थ्य बीमा के प्रीमियम का भुगतान करती है। इससे इन परिवारों को स्वास्थ्य के लिये अस्पताल में जाने पर होने वाले खर्चे की चिंता से मुक्ति मिलती है, हालांकि बीमा की रकम की एक निश्चित सीमा होती है। कुछ योजनाओं में समुदाय के सदस्य प्रतिमाह न्यूनतम इंश्योरेंस प्रीमियम जमा करते हैं और बदले में निश्चित सीमा तक के स्वास्थ्य खर्चे को पाने के हकदार बनते हैं। इसके अलावा कुछ अन्य योजनाओं में सब्सिडी और सार्वजनिक निजी मिश्रण भी की जाती है। सब्सिडी का अर्थ उस फंड से है जो सरकार किसी निजी व्यक्ति या संस्था को निश्चित सुविधाएं उपलब्ध कराने के बदले में देती है। सार्वजनिक–निजी मिश्रण को पारंपरिक रूप से सार्वजनिक–निजी साझेदारी के समान नहीं माना जाता है, लेकिन रोगों के उपचार के लिये यह निजी सेक्टर के साथ किये जाने वाले सहयोग का एक स्वरूप है। इसका उपयोग निजी व्यक्तियों या संस्थाओं को कुछ निश्चित गतिविधियों के संचालन से जोड़ने में किया जाता है। उदाहरण के लिये भारत में संशोधित राष्ट्रीय टीबी नियंत्रण कार्यक्रम को भारी मात्रा में विश्व बैंक से फंड मिलता है और निजी सेक्टरों का अभियान से जुड़ाव इसका महत्वपूर्ण घटक है।

8.5 साझेदारी में हितधारकों की भूमिका (Role of Stakeholders in PPP)

पीपीपी में विभिन्न प्रकार के हितधारक प्रमुख भूमिका निभाते और पीपीपी के गुणों को निर्धारित करते हैं। हितधारक व्यक्ति, समूह या संस्थान हो सकते हैं जिनका किसी संस्थान के कार्यों, नीतियों, निर्णयों और फैसलों पर प्रत्यक्ष या परोक्ष प्रभाव हो। हितधारकों की श्रृंखला और व्यापकता इस पर निर्भर करती है कि मुद्दा और अभिरुचियों का दायरा स्थानीय है या क्षेत्रीय अथवा अंतर्राष्ट्रीय (Venkat Raman 2004: 102) किसी सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवा संस्थान में हितधारक सेवा वितरण के स्तरों पर निर्भर करते हैं, ये सेवा स्तर है– स्थानीय (प्राथमिक चिकित्सा), ब्लॉक या जिला (द्वितीयक चिकित्सा), प्रांतीय (क्षेत्रीय चिकित्सा) और राष्ट्रीय। रमन और जोर्कमैन (2009) विभिन्न हितधारकों की भूमिका और लक्ष्यों को स्पष्ट करते हैं। उनके अनुसार कुछ प्रमुख हितधारक और उनके उद्देश्य निम्नवत हैं:

सरकारः स्वास्थ्य विभाग–स्वास्थ्य मंत्रालय और अन्य एजेंसियां

सार्वजनिक स्वास्थ्य व्यवस्था जो निःशुल्क स्वास्थ्य सेवा मुहैया कराती है, वह चिकित्सा का प्राथमिक स्तर है। इस व्यवस्था में सरकार विभिन्न स्तरों पर स्वास्थ्य संबंधी नीतियों और कार्यक्रमों के नियोजन, नियमन और उन्हें लागू करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करती है। सरकार और संबंधित एजेंसियां परिणामों, क्षमताओं, शोध आदि के जरिये स्वास्थ्य व्यवस्था की निगरानी का काम भी करती हैं।

विशेषज्ञ स्वास्थ्यकर्मी

स्वास्थ्य के क्षेत्र में कुशल और प्रशिक्षित पेशेवरा महत्वपूर्ण हितधारक हैं। चिकित्सक, नर्सें, पैरामेडिकल कर्मचारियों की स्वास्थ्य सेवा के क्षेत्र में अपरिहार्य भूमिका होती है। स्वास्थ्य सेवाओं की अच्छी गुणवत्ता के लिये इन विशेषज्ञ पेशेवरों की गुणवत्ता और क्षमता भी बेहतरीन होना आवश्यक है।

अप्रशिक्षित या गैर पेशेवर कर्मी

ये भी स्वास्थ्य सेवा के क्षेत्र में उल्लेखनीय भूमिका निभाते हैं। स्वास्थ्य सेवाओं की व्यवस्था के सुगम संचालन के लिये उनकी सेवाएं अत्यावश्यक हैं। ये कर्मचारी मरीजों को वे सुविधाएं उपलब्ध कराते हैं, जो स्वास्थ्य चिकित्सा संस्थानों के प्रति मरीजों की धारणा को प्रभावित करती हैं।

संघ या संगठन

विभिन्न स्तरों पर संगठित संघ कार्य, कार्यदक्षता और श्रम अधिकारों की मांग विभिन्न स्तरों पर करते हैं। दूसरी ओर, पेशेवरों की एसोसिएशनें बातचीत और सिफारिश से अपनी शक्तियों को आसानी से विस्तार देती हैं।

जनता

स्वास्थ्य को अधिकार मानने वाली जनता बाहरी हितधारक है। जनता बेहतरीन गुणवत्ता, पहुंच और अच्छी स्वास्थ्य सेवाओं की उम्मीद करती है। विकासशील देशों में आर्थिक और सामाजिक तौर पर उपेक्षित वर्गों के लोगों की अपने इस अधिकार को हासिल कर पाने की क्षमता हमेशा से कमजोर रही है। बेहतर स्वास्थ्य सेवाओं के लिये उनकी निरंतर मांग ही स्वास्थ्य सेक्टर में सुधार ला सकती है।

निजी सेक्टर

निजी स्वास्थ्य सेवाओं में बेहतर संसाधन और गुणवत्ता पायी जाती है और इन सुविधाओं–सेवाओं के बदले उच्च दाम और लाभ कमाना ही उनका प्रमुख लक्ष्य होता है। प्रत्यक्ष स्वास्थ्य सेवाओं, स्वास्थ्य बीमा, फार्मास्यूटिकल आदि विभिन्न स्तरों पर वे सेवाएं प्रदान करते हैं। हाल के वर्षों में निजी व्यापारिक हितधारक अधिक प्रभावी होते गये हैं।

गैरसरकारी और समुदाय आधारित संगठन

गैरसरकारी और समुदाय आधारित संगठनों की भूमिका भारत के सन्दर्भ में बहुत महत्वपूर्ण है। वे विभिन्न स्तरों पर विविध गतिविधियों से संबद्ध होते हैं। कार्यों को लेकर प्रतिबद्धता और नैतिक मूल्यों का ख्याल रखना इनकी पहचान हैं। नवोन्मेषी सेवाओं को प्रदान करने, प्रशिक्षण और अन्य विशेष कार्यक्रमों के संचालन, विभिन्न स्वास्थ्य सेवाओं के वितरण के लिये प्रभावी साझेदारियां करने और समाज के कमजोर वर्गों तक बेहतर स्वास्थ्य सुविधाएं पहुंचाने के लिये वे काम करते हैं।

निर्वाचित प्रतिनिधि

जनप्रतिनिधि मुख्यतः अपने निर्वाचन क्षेत्र में विभिन्न सेवाओं, विशेषकर स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता के लिये काम करते हैं। भारत में स्वास्थ्य का विषय राज्य सूची में रखा गया है और स्थानीय निर्वाचित जनप्रतिनिधियों की प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं को अधिक प्रभावी व क्षमतावान बनाने में अहम भूमिका है।

भारत जैसे लोकतांत्रिक देश में विकेन्द्रीकृत सरकारों को स्वास्थ्य सेवाओं से जुड़े सभी पहलुओं के सन्दर्भ में निर्णय लेने की अधिक क्षमता और स्वतंत्रता प्राप्त है।

विशेष रुचि समूह

विभिन्न युवा समूह, धार्मिक समाजसेवी समूह रक्तदान शिविर और कई अन्य जागरूकता अभियानों का संचालन करते हैं। ये समूह स्थानीय से लेकर अंतर्राष्ट्रीय स्तर तक मिलते हैं, उदाहरण के लिये कैंसर सोसयटी, हार्ट फाउंडेशन आदि। ये समूह स्वास्थ्य से जुड़े विभिन्न मुद्दों को लेकर जागरूक करने के अलावा सरकारी संस्थाओं के साथ अभियान चलाने में मदद करते हैं।

स्वास्थ्य बीमा तृतीय पक्ष प्रशासक

अधिकतर विकासशील देशों में स्वैच्छिक स्वास्थ्य बीमा का अभाव है। स्वास्थ्य सेवाएं निजी सेक्टर द्वारा उपलब्ध करायी जाती हैं या सब्सिडी दी जाती है। निजी सेक्टर के तेजी से विकास के साथ निजी बीमा कंपनियां भी महत्वपूर्ण हितधारक के तौर पर उभरी हैं। स्वास्थ्य बीमा भारत में आरंभिक काल में है, लेकिन बीमा कंपनियां तृतीय पक्ष प्रशासक के तौर पर चिकित्सकीय मूल्यांकन का काम कर रही हैं।

8.6 पीपीपी के लाभ एवं सीमाएं (Advantages and Limitations in PPP)

पीपीपी के तहत संचालित कार्यक्रम प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा में सुधार और इसके जरिये जीवन की गुणवत्ता में सुधार कर सकते हैं। अधिकतर निजी स्वास्थ्य सेवाप्रदाता द्वितीयक या क्षेत्रीय स्तर पर ही उपलब्ध होते हैं, लेकिन पीपीपी के जरिये प्राथमिक केन्द्रों पर भी स्तरीय सुविधाएं उपलब्ध करायी जा सकेंगी। इससे संबंधित क्षेत्रों में रहने वाले लोगों को भी इलाज के लिये लंबी दूरी की यात्रा करने की परेशानी से निजात मिलेगी। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि पीपीपी ग्रामीण भारत में अधिक और बेहतरीन सेवाएं उपलब्ध कराने का अच्छा माध्यम है। लेकिन, यहां यह सुनिश्चित करना भी आवश्यक है कि पीपीपी के तहत उठाये जाने वाले कदम सिर्फ शहरी क्षेत्रों तक सीमित नहीं रहें और इनकी पहुंच ग्रामीण क्षेत्रों तक विस्तारित हो। अद्वितीय कार्यसिद्धांत के जरिये पीपीपी मॉडल उपलब्ध श्रमशक्ति की गुणवत्ता और मात्रा बढ़ाने का भी काम करता है।

पीपीपी मोड की सीमाओं की बात की जाये तो यहां सबसे पहली चिंता यह सामने आती है कि कहीं पीपीपी के भरोसे रहने के कारण सरकार स्वास्थ्य सेवाओं की जिम्मेदारी पूरी तरह छोड़ न दे। सरकार स्वयं को बेहद छोटी भूमिका तक सीमित कर देगी और निजी सेक्टर को अपने निवेश पर मजबूत करने का काम करेगी। ऐसा होने की स्थिति में एनआरएचएम जैसे मौजूदा अभियानों और इनकी उपलब्धियों पर बुरा असर हो सकता है। पीपीपी की आलोचना का सबसे बड़ा बिन्दु यह है कि यह स्वास्थ्य सेवाओं के कॉरपोरेटीकरण को बढ़ावा देता है। यह स्वास्थ्य सेवा को उद्योग की तरह स्थापित कर सकता है, जिसका जोर लाभ कमाने पर होगा और इसके चलते समाज के उपेक्षित वर्गों को उनके ही हाल पर छोड़ दिये जाने की आशंका है। इसके अलावा भ्रष्टाचार में बढ़ोतरी की आशंका के साथ असमानता और बुनियादी मूल्यों के साथ समझौता किये जाने की भी स्थिति बन सकती है।

मुख्य उद्देश्य जागरूकता बढ़ाना और सेवाप्रदाताओं में रोगियों के इलाज में गुणवत्ता मानकों के प्रति उत्तरदायित्व में बढ़ोतरी करना होना चाहिये। ऐसे में नियमन और नियंत्रण के जरिये सेवाप्रदाताओं के लिये ऐसा माहौल बनना चाहिये कि वे नागरिकों को समुचित देखभाल देते हुये उनकी बुनियादी आवश्यकताओं का ध्यान रखें। रोगियों के कल्याण की सुरक्षा के सरकार के दायित्व की पूर्ति के लिये निगरानी भी आवश्यक है। यह सुनिश्चित किया जाना जरूरी है कि मरीजों को जोखिम, इलाज के महंगे दाम, शोषण और भ्रष्टाचार से बचाये रखा जाये। नियमन के लिये यह आवश्यक होगा कि वह गैरजरूरी इलाज, शुल्क

में मनमानी और स्वास्थ्य मानकों की अनदेखी पर नजर रखे। मूल्यपरक चिकित्सा कर्म, पारदर्शिता और ग्राहकों तक सही शुल्क व गुणवत्ता की जानकारी पहुंचाना, अस्पतालों के लाइसेंस और मान्यता की प्रक्रिया आदि का काम भी इसके जरिये किया जाना चाहिये। (RNCMH, 2005)

8.7 विभिन्न देशों में पीपीपी (PPP in Different Countries)

विभिन्न देशों में अलग–अलग नीतियों के चलते सार्वजनिक–निजी साझेदारी के मॉडलों में भी विभिन्नताएं देखी जाती हैं। ये पीपीपी मोड विभिन्न आवश्यकताओं के सन्दर्भों के अनुकूल हो सकते हैं। स्वास्थ्य सेवा के क्षेत्र में पीपीपी को लागू करने का एक मुख्य कारण सार्वजनिक व्यवस्था की राह में आने वाली बाधाएं, निजी सेक्टर के तेजी से विकास और यह धारणा कि निजी सेक्टर ही बेहतर तकनीक, संसाधनों के जरिये बेहतर स्वास्थ्य सुविधा दे सकता है। यही वजह है कि कई सरकारें इसे निजी सेक्टर के लिये नये रास्तों की तलाश में मदद के साथ सार्वजनिक बजट पर बढ़ते दबाव को कम करने का जरिया भी मानती हैं। (Hodge and Greve2007).

- **यूरोपः** यूरोप में मुख्यतः दो प्रकार की स्वास्थ्य व्यवस्थाएं संचालित हैं। पहली– राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा, जिसमें वित्त–निवेश, सेवाप्रदाता, नियमन के तौर पर राज्य अहम भूमिका निभाता है। दूसरी– सामाजिक बीमा मॉडल, जिसमें स्वास्थ्य सेवाओं के प्रति राज्य की भूमिका नियमन तक सीमित होती है, जबकि निवेश और सेवाप्रदाता की भूमिका सार्वजनिक और निजी सेवाप्रदाता निभाते हैं (Grimmeisen and Rothgang 2004). यूरोप के भीतर यूनाइटेड किंगडम ने सार्वजनिक और निजी निवेश के जरिये स्वास्थ्य सेवा में सार्वजनिक–निजी व्यवस्था का संतुलन कायम किया है। वहां निजी सेक्टर की स्वास्थ्य सेवाओं में भागीदारी बढ़ी है, लेकिन 1948 में राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवाओं में प्रतिपादित सबको निःशुल्क इलाज का लक्ष्य अब भी बना हुआ है। मौजूदा स्वास्थ्य व्यवस्था निजी और सार्वजनिक दोनों तरह की व्यवस्थाओं से चलती है। स्केन्डेनेवियन देशों में सार्वजनिक–निजी साझेदारी को लेकर कोई मजबूत दृष्टिकोण नहीं है, वहां विभिन्न मॉडल इस्तेमाल किये जा रहे हैं। डेनमार्क और स्वीडन में स्वच्छता, कचरा निस्तारण, बुजुर्गों की देखभाल समेत स्थानीय सरकारों के करीब 12 फीसदी कार्य अनुबंध पर निजी सेवाप्रदाताओं को दिये गये हैं। स्वीडन में स्वास्थ्य सेवाएं स्थानीय परिषदों में विकेन्द्रीकृत हैं, जो राष्ट्रीय मानकों के अनुरूप अपने यहां इलाज की शुल्क दरें तय करते हैं। स्विट्जरलैंड में 1996 से स्थायी नागरिक स्वास्थ्य बीमा खरीद सकते हैं। वहां बीमाधारकों का संघीय कार्यालयों में सामाजिक बीमा के तहत पंजीकरण आवश्यक है, ताकि उनकी गतिविधियों और उनके खातों की स्क्रूटनी की जा सके। जर्मनी, फ्रांस और नीदरलैंड में बीमा आधारित स्वास्थ्य व्यवस्थाएं संचालित होती हैं, जिसके लिये कर्मचारी और नियोक्ता दोनों ही वेतन का कुछ प्रतिशत हिस्सा भुगतान करते हैं। यूरोप में स्वास्थ्य सेवाओं में निजी सेक्टर का जुड़ाव चार प्रकार से मिलता है। 1. क्षेत्रीय स्वास्थ्य निकाय के लिये निजी लोन, 2. सार्वजनिक–निजी साझेदारी, जिसमें निजी सेक्टर अस्पताल में चिकित्सकीय कार्यों का प्रबंधन भी संभालता है, 3. निजी और सार्वजनिक फंडिंग, 4. टैक्स और सामाजिक स्वास्थ्य बीमा योजनाओं से मिलने वाला निवेश।
- **अमेरिका और कनाडाः** अमेरिका में राजनीतिक और जनकल्याण व्यवस्था में सार्वजनिक–निजी साझेदारी अहम रही है। संघीय और राज्य सरकारें सार्वजनिक सेवाओं में प्रबंधन और सेवाप्रदाता के

रूप में मुख्यतः निजी संस्थाओं को शामिल करती हैं। सरकार लाभधारकों, सेवाप्रदाताओं और सेवाग्राहकों के निर्णयों पर नियंत्रण का काम करती है। निजी और सार्वजनिक एजेंसियां परस्पर निर्भर होती हैं, लेकिन उनका संबंध असमान होता है, क्योंकि यहां सरकार साझेदार के बजाय सिर्फ प्रायोजक की भूमिका निभाती है। अमेरिकी स्वास्थ्य सेवा व्यवस्था में नीलामी, टेंडरिंग के चलते निवेशकों, उत्पादन–सेवाओं, प्रोत्साहन और सेवाप्रदाता संगठनों के राजनीतिक प्रभावों के संबंध बहुत जटिल होते हैं (Mills and Broomberg 1998). वहीं, कनाडा में स्वास्थ्य खर्चों का 70 प्रतिशत हिस्सा सार्वजनिक संसाधनों के जरिये उठाया जाता है। यहां गैर लाभकारी संगठन महत्वपूर्ण भूमिका में हैं। उनके अपने स्वतंत्र समुदाय आधारित निदेशक मंडल हैं। कनाडा के कई प्रांतों में स्वास्थ्य सेवाओं में निजी और सार्वजनिक मिश्रण का इतिहास रहा है।

- **लैटिन अमेरिका और कैरेबियाई देशः** इन देशों में निजी सेक्टर बहुत अधिक सक्रिय हैं। यहां अनुबंध संविदा निजी साझेदारों के साथ जुड़ाव का सबसे प्रचलित माध्यम है, हालांकि सभी क्षेत्रों में यह एकसमान नहीं है। लैटिन अमेरिका और कैरेबियाई क्षेत्रों में निजी सेक्टर प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं के विस्तार, दवाओं, उपकरणों और अन्य आवश्यक सामान की उपलब्धता की सुनिश्चितता तथा स्वास्थ्य सेवाओं की गुणवत्ता में सुधार के लिये गैर सरकारी संस्थाओं का चयन कर उनके साथ अनुबंध करते हैं।
- **आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंडः** आस्ट्रेलिया में पहले संघीय प्रतिस्पर्धा नीति पर आधारित निजीकरण और अनुबंध प्रचलित था, जिसके बाद यहां सार्वजनिक–निजी साझेदारी को उभार मिला। हालांकि, संघीय शासन ने यह नीति लागू की थी, लेकिन इसके प्रमुख हितधारक राज्य सरकारें थीं, क्योंकि अधिकतर अनुबंध उनके ही कार्यक्षेत्र में शामिल थे। 1995 से सार्वजनिक सेवाओं का बाजारीकरण बाहरी संविदा में बढ़ोतरी और उपयोग–शुल्क को प्रारंभ करने का जरिया बना। न्यूजीलैंड में टैक्स आधारित सार्वजनिक निवेश वाली स्वास्थ्य सेवाएं थीं, जहां राज्याधीन अस्पतालों के नेटवर्क में निःशुल्क और सामान्य निजी चिकित्सकों द्वारा शुल्क आधारित स्वास्थ्य सेवाएं प्रदान की जाती थीं। बाद में हुये सुधारों में अनुबंध स्वास्थ्य चिकित्सा व्यवस्था का अहम गुण बन गया।
- **अफ्रीकाः** यहां निजी सेक्टर विविध है, जिसमें संस्थानों, संगठनों और व्यक्तियों की विस्तृत श्रृंखला उपलब्ध है। अफ्रीका के कुछ देशों में औपचारिक गैर लाभकारी सेक्टर सर्वाधिक प्रभावी हैं, जिनमें धार्मिक ट्रस्टों के अस्पताल शामिल हैं। एक आकलन के अनुसार वहां ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाओं का अधिकतर हिस्सा गैर सरकारी संगठनों पर आधारित है जो सरकार से मिलने वाले अनुदानों और सब्सिडी पर निर्भर हैं। इन संस्थाओं का कुल स्वास्थ्य सेवाओं पर 2/5 हिस्सा है (Oswe 2006). स्वास्थ्य निवेश का मुख्य साधन निजी भुगतान है। अफ्रीका में लाभकारी निजी सेक्टर पर पारंपरिक उपचारकों का प्रभुत्व है। एक आकलन के अनुसार अफ्रीका में 4/5 हिस्सा इन पर पूर्ण या आंशिक विश्वास करता है (WHO, 2002)। कुछ स्थानों पर निजी सेक्टर की ओर से दी जाने वाली स्वास्थ्य सेवाएं गुणवत्ता के लिहाज से बेहतर हैं। अनुबंध, वाउचर योजना समेत सार्वजनिक–निजी साझेदारी के कई मॉडल अफ्रीका में अपनाये जा रहे हैं। अफ्रीका का एक अहम मसला यह है कि यहां निजी सेक्टर अच्छी तरह संगठित नहीं है और इसके चलते यहां सरकार को सार्वजनिक–निजी साझेदारी में सामने आने वाली समस्याओं के निस्तारण में खासी परेशानी आती है।

- **एशियाः** सबसे बड़े महाद्वीप में बड़ी संख्या में देश मौजूद हैं और सार्वजनिक–निजी साझेदारी के भी विविध प्रकार यहां उपलब्ध हैं। सिद्दीकी और अन्य द्वारा वर्ष 2006 में किये गये अध्ययन के अनुसार पश्चिमी एशिया और मध्य क्षेत्र के दस देशों में अनुबंध संविदा प्रचलित है, लेकिन यह व्यवस्था अकेले स्वास्थ्य क्षेत्र की सभी समस्याओं और बढ़ती मांगों को हल करने में सक्षम नहीं है। स्वास्थ्य मंत्रालयों में अनुबंध के लिये समर्पित इकाई का अभाव है, इसके अलावा निजी सेक्टर को प्रारूप तैयार करने, मूल्य–लागत तय करने, भुगतान के तरीके तय करने, प्रोत्साहन, अनुबंध के तहत कार्यों की निगरानी के भी सीमित अधिकार हैं। एशिया के दूसरे हिस्सों, भारत, पाकिस्ता, बांग्लदेश में सार्वजनिक–निजी साझेदारी के कई मॉडल प्रचलित हैं, जिनमें से एक महत्वपूर्ण उदाहरण क्षय रोग के उन्मूलन में निजी सेक्टर को शामिल करना है। इस साझेदारी में सभी महत्वपूर्ण कारकों को विस्तार से समझाने के साथ अनुबंध किये गये हैं।

8.8 निष्कर्ष (Conclusion)

विभिन्न देशों में किये गये तुलनात्मक अध्ययनों से स्पष्ट हुआ है कि निजी सेक्टर के साथ साझेदारी (विशेषकर निम्न और मध्य आय वाले देशों में) स्वास्थ्य सेवा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करती है। हर देश को यह मालूम है कि स्वास्थ्य क्षेत्र में गुणवता और लोगों तक पहुंच बढ़ाने के लिये इस तरह की भागीदारी अहम है। वर्ष 2010 में वर्ल्ड हेल्थ असेंबली ने एक प्रस्ताव पारित किया, जिसमें विभिन्न देशों को आवश्यक और बुनियादी स्वास्थ्य सेवाएं मुहैया कराने के लिये रचनात्मक रूप से निजी सेक्टर को शामिल करने का सुझाव दिया गया। लेकिन, इस लक्ष्य को हासिल करने के लिये सरकार के लिये यह जरूरी है कि वह आवश्यक संसाधनों में निवेश करे और इस तरह की साझेदारी में सामने आने वाले सभी संभावित जोखिमों को कम करने के साथ साझेदारी को लागू करने में आने वाली चुनौतियों की भी निगरानी करे।

8.9 भावी अध्ययन (Further Readings)

- Briggs, Asa. (1961). *The Welfare State in Historical Perspective*. European Journal of Sociology.
- Brown N. (1995). A brief history of telemedicine. Telemedicine Information Exchange.
- Grimmeisen, Simone & Rothgang, Heinz & Heinz Rothgang, Dr. (2004). The changing role of the state in Europe's health care systems.
- Hodge A, Graeme & Greve Carsten, (2016). On Public-Private Partnership Performance: A contemporary review
- Khushbu B. Thadani, Procedia. (2014). International Relations Conference on India and Development Partnerships in Asia and Africa: Towards a New Paradigm (IRC-2013) Public Private Partnership in the Health Sector: Boon or Bane. Social and Behavioral Sciences
- Mills, Anne & Broomberg, Jonathan (1998),Experiences of contracting: An overview of the literature, World Health Organisation, Geneva
- Thompson R, Ceri & Mckee Martin (2004, March) Financing and Planning of public and private not- for –profit hospitals in the European Union, Health Policy.

- Venkat Raman, A. (2004). Those Who Matter: Group-based Stakeholder Analysis. In The 2004 Pfeiffer Annual (consulting) edited by E. Biech. San Francisco: John Wiley & Sons.
- Venkat Raman, A; Bjorkman Warner, James. (2009). Public-Private Partnerships in Health Care in India: Lessons for developing countries, Routledge, New York.

इकाई -9

चिकित्सा पर्यटन (**Medical Tourism**)

9.1 उद्देश्य
9.2 परिचय
9.3 भारत में चिकित्सा पर्यटन का विकास
9.4 चिकित्सा पर्यटन से जुड़े मुद्दे और चिंताएं
9.5 निष्कर्ष
9.6 भावी अध्ययन

9.1 उद्देश्य (**Objectives**)

इस इकाई के अध्ययन के बाद हम जान पायेंगे कि –

- चिकित्सा पर्यटन का अर्थ क्या है
- भारत में चिकित्सा पर्यटन का विकास कैसे हुआ और इसके मुख्य गुण क्या है
- चिकित्सा पर्यटन के क्षेत्र में उभरते मुद्दों और चुनौतियों का विश्लेषण

9.2 परिचय (Introduction)

चिकित्सा पर्यटन को मौजूदा दौर की लोकप्रिय जनसंस्कृति माना जा सकता है, जिसके तहत लोग स्वास्थ्य सेवाएं प्राप्त करने और डेंटल, चिकित्सकीय, शल्य क्रियाएं आदि सुविधाएं प्राप्त करने के लिये अपने देश से दूसरे देश की यात्रा करते हैं (Connell, 2000). प्राचीन ग्रीस में यह देखा जाता था कि पूरे भूमध्य क्षेत्र से बड़ी संख्या में लोग प्राचीन ग्रीक नगर एपीडोरस आया करते थे, जिसे स्वास्थ्य के देवता एस्कलेपियोस का स्थान माना जाता था। इसी तरह समृद्ध यूरोपियन उत्तरी अफ्रीका की ओर जाते थे। रोम में लोग स्पा नगरों के तौर पर जाने जाने वाले स्थानों में जाया करते थे, जहां स्वास्थ्यप्रद शुद्ध जल उपलब्ध था (Prasad, 2008)। भारत में चिकित्सा यात्री और आध्यात्मिक छात्र योग और आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धतियां सीखने के लिये पांच हजार वर्ष पूर्व से आते रहे हैं। हाल के वर्षों में लोगों का बेहतर और कम लागत वाली स्वास्थ्य सेवाएं हासिल करने के लिये यात्रा करना आम हो गया है। ऐसे रोगियों की संख्या में लगातार इजाफा दर्ज किया जा रहा है और उन मेजबान देशों के लिये यह बेहतर व्यावसायिक अवसर प्रदान करने का जरिया बना है, जहां तकनीकी, कौशल, अवस्थापना आदि संसाधन उपलब्ध हैं Graburn(1977)। यहां यह तथ्य रोचक है कि चिकित्सा और पर्यटन इन दो शब्दों को एकसाथ करना अपने आप में विरोधाभासी लगता है। ये ऐसे दो शब्द हैं, जिन्हें लोग सामान्यतः एकसाथ रखना नहीं चाहेंगे। पर्यटन का अर्थ आराम, मनोरंजन, सुख–सुविधाओं से है, जबकि चिकित्सा शब्द लोगों को इन सबमें बाधा और पीड़ा के तौर पर नजर आता है। लेकिन हम देखते हैं कि ये शब्द न सिर्फ एकसाथ रखे गये हैं, बल्कि यह मौजूदा दुनिया में तेजी से उभरते उद्योगों में से एक बन गया है।

पहले बेहतर गुणवत्ता और तकनीकी रूप से अच्छी चिकित्सा सुविधाओं के चलते विकासशील देशों के लोगों में विकसित देशों में जाने का रुझान देखा जाता था, लेकिन अब इस रुझान में बदलाव आया है और पश्चिमी देशों से लोग बेहतर इलाज के लिये दक्षिणी–पूर्वी एशिया के विकासशील देशों में आने लगे हैं। इसकी वजह इन देशों में आधुनिक, उच्च तकनीक का इलाज कम खर्चे पर उपलब्ध होना है। इनके अलावा भी कई कारण हैं, जिनके परिणामस्वरूप ये बदलाव आये हैं और इस इकाई में हम इन सबको समझने वाले हैं।

कोहेन (2010) यात्रा के स्वास्थ्य कारणों के आधार पर चिकित्सा पर्यटकों की चार श्रेणियां बताते हैं। पहली श्रेणी है, सिर्फ पर्यटक यानी ऐसे लोग जो किसी चिकित्सकीय उपचार कारण से यात्रा नहीं करते, बल्कि उनका लक्ष्य सिर्फ घूमना–फिरना होता है। दूसरा प्रकार है चिकित्सारत पर्यटकों का जो किसी देश में भ्रमण के दौरान स्वास्थ्य संबंधी परेशानियों के कारण चिकित्सा लेते हैं। तीसरा है अवकाशरत रोगी, जो इलाज करवाने के साथ घूमने के मकसद से भी किसी देश की यात्रा करते हैं। और चौथा प्रकार है सिर्फ रोगी का, यानी ऐसे लोग जो सिर्फ चिकित्सा उपचार हासिल करने के मकसद से किसी देश की यात्रा करते हैं।

उनका इसके अलावा अन्य कोई लक्ष्य नहीं होता। चिकित्सा पर्यटन को स्वास्थ्य एवं कल्याण पर्यटन, चिकित्सा आउटसोर्सिंग, वैश्विक स्वास्थ्य देखभाल आदि नामों से भी जाना जाता है। लेकिन विटेकर (2008) चिकित्सा पर्यटन को स्वास्थ्य पर्यटन से अलग मानते हैं। वह बताते हैं कि चिकित्सा पर्यटन का लक्ष्य मुख्यतः जैवचिकित्सकीय प्रक्रियाएं हैं, जिनमें यात्रा और पर्यटन भी शामिल होते हैं, दूसरी ओर स्वास्थ्य पर्यटन का मुख्य लक्ष्य कायाकल्प और इसके लिये वैकल्पिक या पारंपरिक चिकित्सा सुविधा का इस्तेमाल करना है। लेकिन आमतौर पर इन दोनों शब्दों का प्रयोग एक–दूसरे के लिये कर लिया जाता है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन की ओर से प्रकाशित रुगेरी और अन्य (2014) के शोध वैश्विक चिकित्सा पर्यटन के विभिन्न कारकों पर प्रकाश डालते हैं। ये बताते हैं कि चिकित्सा यात्राओं के प्रमुख कारण स्वास्थ्य तकनीक, यात्रा एवं उपचार की कम लागत और रोगियों को आकर्षित करने के लिये विस्तृत मार्केटिंग व विज्ञापन हैं। यह चिकित्सा पर्यटन को इस तरह स्पष्ट करते हैं, 'यह चिकित्सकीय उपचार प्राप्त करने के लिये अंतर्राष्ट्रीय सीमाओं के पार यात्रा करने की प्रक्रिया है। इसमें चिकित्सा सेवाओं की पूरी श्रृंखला हो सकती है, लेकिन मुख्यतः दंत चिकित्सा, सौन्दर्य संबंधी शल्य चिकित्सा और जननक्षमता संबंधी उपचार इसमें आते हैं।' इस अध्ययन में चिकित्सा पर्यटन के अवसरों और लाभों (बेहतर देखभाल, कम लागत, कम प्रतीक्षाकाल) को स्पष्ट किया गया। यह भी बताया गया कि इससे स्थानीय समुदायों के लिये भी बेहतर चिकित्सा सुविधाएं और उन तक पहुंच बढ़ती है। स्वास्थ्य सेवाओं में प्रतिस्पर्धा से खर्चों पर नियंत्रण और नये स्थानों में चिकित्सा सुविधाओं के विकास से लोगों की इन तक पहुंच में भी वृद्धि होती है। और विकसित देशों के लिये इस तरह की चिकित्सा यात्राएं राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवाओं के दबाव को कुछ कम कर सकती हैं। चिकित्सा पर्यटन के कई जोखिम और नकारात्मक परिणाम भी हैं, क्योंकि इसमें अतिरिक्त खर्चा हो सकता है और यह भी संभव है कि बीमा योजनाओं में यह कवर नहीं किया जाता हो। अपरिचित स्थान और सांस्कृतिक भिन्नता भी परेशानियां खडी कर सकती हैं और इसका असर रोगी के सुधार पर भी पड़ सकता है। चिकित्सकीय कार्यों के मानक भी विभिन्न देशों में अलग हो सकते हैं। चिकित्सा पर्यटन स्थानीय समुदाय को भी विशेषज्ञ चिकित्सकों की ओर से पर्याप्त देखभाल से वंचित कर सकती है और इसके चलते समय–समय पर विभिन्न चिकित्सकीय प्रक्रियाओं के दामों में भी बढ़ोतरी दर्ज की जा सकती है। कुछ अन्य चिंताओं में गुणवत्ता और विभिन्न देशों के राष्ट्रीय आंकड़ों की की अनुपलब्धता है, जो विभिन्न विकास दिखाने तथा निजी निवेश बढ़ाने के मकसद से सांख्यिकीय तौर पर गलत जानकारी दिये जाने का कारण बन सकती है। चिकित्सकीय गुणवत्ता मानकों का विकास काफी तेजी से हो रहा है, वर्तमान में हर देश के अपने नियम और गुणवत्ता मानक हैं और मानकों की यह विभिन्नता रोगियों के लिये परेशानी का कारण बन सकती है। चिकित्सकीय मानकों के अलावा कानूनी और आर्थिक कारकों में भी संतुलन और मानकीकरण की आवश्यकता है ताकि आर्थिक और अन्य जोखिमों को कम किया जा सके। यह लक्ष्य हासिल करने के लिये एकसमान परिभाषा और मापदंड बनाने की जरूरत है। रोगी की इच्छा और निर्णयों को प्राथमिकता से महत्व दिया जाये।

स्वास्थ्य देखभाल और पर्यटन उद्योग सबसे तेजी से विकसित होने वाला और सबसे बड़ा उद्योग है। स्वास्थ्य और पर्यटन एकसाथ जुड़कर किसी स्थान विशेष के संस्थानों, उद्योगों और लोगों को लाभ पहुंचाते हैं। ऐसे में यह भी आवश्यक है कि संबंधित संस्थान प्रभावी रूप से कार्य करें, ताकि देश के चिकित्सा पर्यटन अवसरों को वे बढ़ाने व सतत बनाये रखने का काम कर सकें। एशिया पैसिफिक क्षेत्र वैश्विक

चिकित्सा पर्यटन बाजार का बड़ा हिस्सेदार है, जिसकी प्रतिशतता वर्ष 2016 में 43.7 प्रतिशत दर्ज की गयी थी। इसका मुख्य कारण अवस्थापना विकास में भारी निवेश, उभरती अर्थव्यवस्था, तकनीक में सुधार, कम लागत, गुणवत्तापरक स्वास्थ्य सेवाएं और संबंधित देशों में सरकारों की ओर से पर्याप्त समर्थन एवं समर्थन हैं। चिकित्सा पर्यटन के लिहाज से थाईलैंड, सिंगापुर, मलेशिया, भारत और फिलीपींस एशियाई बाजार के बड़े और प्रमुख स्थान हैं। थाईलैंड सौंदर्य संबंधी शल्य चिकित्सा में, जबकि सिंगापुर और भारत जटिल शल्यक्रियाओं (भारत कम लागत के लिहाज से और सिंगापुर बेहतर तकनीक के लिहाज से) के लिये जाने जाते हैं। भारत को चिकित्सा पर्यटन और इससे जुड़े विभिन्न घटकों के प्रमुख प्रतिपादकों में से एक माना जाता है।

9.3 भारत में चिकित्सा पर्यटन का विकास (Growth of Medical Tourism in India)

वर्ष 1991 में नवउदारवादी आर्थिक नीतियों ने भारत में निजी सेक्टर को निजी स्वास्थ्य सेवाओं–सुविधाओं के विकास के लिये प्रेरित किया और यही आगे चलकर चिकित्सा पर्यटन के विकास का प्रमुख कारण और साधन बना। निजीकरण और वैश्वीकरण का जुड़ाव भारत में चिकित्सा पर्यटन के विकास का जरिया बन गये। वैश्वीकरण ने विभिन्न देशों को 'समान ज्ञान वाले समाज' के तौर पर जुड़ने में मदद की। इसमें चिकित्सा संस्थानों ने बड़ी भूमिका निभायी और वे अपनी सेवाओं, सुविधाओं और इनके परिणामों के जरिये वैश्वीकृत होने में सफल रहे। इंटरनेट ने भी मरीजों को यह सहूलियत दी कि वे दुनियाभर में मौजूद चिकित्सा सुविधाओं में से अपने लिये उपयुक्त स्थान का चयन कर सकें (Reddy, Qadeer: 2010). वर्ष 2012 में चिकित्सा पर्यटन उद्योग के 10.5 अरब अमेरिकी डॉलर तक पहुंचने का आकलन था और वर्ष 2019 तक इसके 32.5 अरब अमेरिकी डॉलर तक पहुंचने की उम्मीद है। इसी तरह भारत में चिकित्सा पर्यटन उद्योग तीन अरब डॉलर तक पहुंच चुका है और वर्ष 2020 तक इसके आठ अरब डॉलर तक पहुंचने का अनुमान है। राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति 2002 में यह स्पष्ट किया गया है कि यह चिकित्सा पर्यटन का समर्थन करती है और भुगतान के आधार पर विदेशी ग्राहकों को इस तरह की सुविधाएं दिये जाने को प्रोत्साहित करती है। नीतियों पर नजर डालें तो मालूम चलता है कि छठी पंचवर्षीय योजना में स्वास्थ्य सेक्टर के निजीकरण का प्रारंभ हुआ था। प्रारंभिक नीति में जनसंख्या को समग्र स्वास्थ्य सुरक्षा देने के मकसद से सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं को उपलब्ध कराना और वित्तीय सुरक्षा पर ध्यान नहीं दिये जाने को भारत के धीमे विकास का कारण माना गया था, जिसके चलते निजीकरण को प्रोत्साहन देना प्रारंभ किया गया। यही वजह थी कि 1980 के दशक में निजी अस्पतालों की बाढ़ सी आ गयी, और 1990 के दशक में कॉरपोरेट अस्पताल बनने लगे। बाद के वर्षों में निजी बीमा सेक्टर भी इस क्षेत्र में सक्रिय हुये।

यहां हम उन कुछ कारकों का विश्लेषण करेंगे, जिन्होंने भारत में चिकित्सा पर्यटन के विकास में अहम योगदान किया। ग्रांट थॉर्न्टन के अनुसार लागत उन प्रमुख कारणों में से सबसे अहम है जो दुनियाभर में चिकित्सा पर्यटकों के 80 प्रतिशत हिस्से को प्रभावित करती है। लागत की चिंता और मानकीकृत सुविधाओं की उपलब्धता ने ही भारत, सिंगापुर, मलेशिया, थाईलैंड, ताईवान, मैक्सिको, कोस्टारिका आदि को स्वास्थ्य पर्यटन का 'हॉट स्पॉट' बना दिया है। इन सब देशों में भी थाईलैंड मानकीकृत सुविधाएं देने में सबसे अव्वल है, इसके बाद भारत का स्थान आता है और भारतीय चिकित्सा पर्यटन बाजार को आने वाले वर्षों में नेतृत्व की क्षमता रखने वाला माना जाता है। भारत में 21 अस्पताल अंतर्राष्ट्रीय संयुक्त आयोग (Joint Commission International: JCI) से मान्यता प्राप्त हैं जो Joint Commission Accreditation for

Hospital organisations (JCAHO) की अंतर्राष्ट्रीय शाखा है। अस्पतालों का राष्ट्रीय या अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त होना जरूरी है और इन मानकों को बनाये रखने से दुनियाभर के विभिन्न हिस्सों के रोगियों में भरोसा जगता है। राष्ट्रीय स्तर पर The National Accreditation Board for Hospitals and Health Care providers (NABH) है, जिसका लक्ष्य स्वास्थ्य सेवाप्रदाता संस्थानों के लिये मानकों का निर्धारण और संचालन व निगरानी है। यहां यह तथ्य भी सामने आता है कि मान्यता प्राप्त करने के लिये अस्पतालों को प्रारंभ में और बार–बार भारी खर्चा करना पड़ता है जो मध्य श्रेणी के अस्पतालों के लिये आसान नहीं होता, जबकि सार्वजनिक अस्पतालों के लिये तो यह सपने सरीखा होता है। हालांकि, इसका सही आंकड़ा अभी सामने नहीं आया है। ये अस्पताल जहां मान्यता के लिये स्पर्धा करते हैं, दूसरी श्रेणी और अधिकतर सार्वजनिक अस्पताल इस दौड़ से बाहर रहते हैं, जिससे वहां मरीजों की भीड़ और सुविधाओं का अभाव नजर आता है (Reddy, Qadeer: 2010) चूंकि भारत दुनियाभर में पर्यटन के लिहाज से बेहतरीन स्थान माना जाता है, मानकीकरण और मान्यता हासिल करने से यहां चिकित्सा पर्यटन को भी बढ़ावा मिल सकता है।

भारत में चिकित्सा विशेषज्ञ और अस्पतालकर्मी चिकित्सा पर्यटकों को आकर्षित करने में अहम भूमिका निभाते हैं। भारत में डॉक्टरों, नर्सों और अन्य पैरामेडिकल स्टाफ की बड़ी संख्या है। चिकित्सा के क्षेत्र में भारतीय मानव संसाधन बेहद मूल्यवान है। यहां कई ऐसे उच्च विशेषज्ञ डॉक्टर हैं जो पश्चिमी देशों में प्रशिक्षण लेकर लौटे हैं और यहां तकनीकी रूप से अधिक दक्ष, सुपरस्पेशलिटी अस्पताल प्रारंभ किये हैं, जिनमें विश्वस्तरीय सुविधाएं उपलब्ध हैं। डॉक्टरों और चिकित्सकीय कर्मियों को अंग्रेजी भाषा का ज्ञान भी अंतर्राष्ट्रीय रोगियों के साथ संपर्क बनाने में मददगार होता है। इंटरनेट ने भी दुनियाभर से चिकित्सा पर्यटकों को यहां पहुंचाने में मदद की है, क्योंकि इंटरनेट पर हर वह जानकारी उपलब्ध है जो मरीज चाहता है।

भारत में आधुनिक, अग्रणी तकनीकें और जांच उपकरण उपलब्ध हैं। समयबद्ध गुणवत्तापूर्ण परीक्षण और नियंत्रण भरोसेमंद सेवा के लिये आवश्यक हैं। कार्डियक सर्जरी, हिप रिप्लेसमेंट सर्जरी, ऑर्थोपेडिक उपचार, आई सर्जरी, कॉस्मेटिक सर्जरी, फर्टिलिटी उपचार आदि वे प्रमुख उपचार हैं, जिनकी मांग भारत में की जाती है। आयुर्वेद, यूनानी, सिद्ध, एक्यूपंक्चर, एक्यूप्रेशर, होम्योपैथी, योग आदि वैकल्पिक चिकित्साओं की भी भारी मांग है। भारत में विभिन्न चिकित्सा पैकेज, जैसे– पूर्ण शरीर स्वास्थ्य परीक्षण, दंत परीक्षण, हृदय स्वास्थ्य परीक्षण आदि आकर्षक दाम पर और कई बार तो ग्राहक के अनुकूल ही उपलब्ध हैं। अमेरिका में बाईपास सर्जरी पर अनुमानित 14 हजार डॉलर का खर्चा आता है, जबकि वही सर्जरी भारत में सिर्फ सात हजार डॉलर यानी करीब तीन लाख रुपये में हो जाती है। एक अन्य लाभ यह है कि यहां अमेरिका, कनाडा की तरह सर्जरी करवाने के लिये लंबी प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती है। ब्रिटेन में राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा योजना में शामिल हो पाने में लंबा वक्त लगता है, जबकि निजी डॉक्टर बेहद महंगे होते हैं। यहां तक कि बांग्लादेश जैसे कम विकसित देशों से भी मरीज भारत आते हैं, क्योंकि उनके यहां आवश्यक तकनीक की उपलब्धता नहीं है। भारत सरकार के एक सर्वे के अनुसार देश में महाराष्ट्र चिकित्सा पर्यटकों को सर्वाधिक आकर्षित करने वाला राज्य है, इसके बाद तमिलनाडु और दिल्ली आते हैं। इनके अलावा केरल, कर्नाटक, राजस्थान, उत्तर प्रदेश भी शामिल हैं। यहां उपलब्ध चिकित्सा सेवाओं को पांच श्रेणियों में बांटा जा सकता है, ये हैं– आधुनिक स्वास्थ्य सेवा, जीवनरक्षक स्वास्थ्य सेवा, स्वास्थ्य कल्याण पर्यटन, वैकल्पिक एवं पूरक

चिकित्सा, कॉस्मेटिक सर्जरी। उपरोक्त वर्णित राज्यों की इस लिहाज से अलग पहचान है, जैसे केरल आयुर्वेदिक चिकित्सा में सबसे आगे है, जबकि महाराष्ट्र और तमिलनाडु की पहचान जीवनरक्षक स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता से है।

भारत सरकार, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय तथा पर्यटन मंत्रालय ने भारत को प्रमुख स्वास्थ्य सेवा प्रदाता देश बनाने के लिये टास्कफोर्स का गठन किया है। घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय पर्यटन को प्रोत्साहन के साथ चिकित्सा पर्यटन को भी विशेष महत्व दिया जा रहा है। भारत सरकार ने चिकित्सा सुविधा का लाभ लेने की इच्छा रखने वाले रोगियों के लिये मेडिकल वीजा की शुरुआत की है, जिसके तहत वीजा की प्रक्रिया जल्द से जल्द पूरी की जाती है। पर्यटन मंत्रालय भी अपनी बाजार विकास योजना को विस्तार देते हुये **Joint Commission International और the National Accreditation Board of Hospitals (NABH) certified hospital** से जुड़ रहा है। पर्यटन मंत्रालय ने सभी राज्य सरकारों को आयुर्वेद एवं पंचकर्म केन्द्रों को मान्यता प्रदान करने संबंधी गाइडलाइन दी है, जबकि केन्द्र सरकार 'इनक्रेडिबल इंडिया' अभियान के तहत पर्यटन के साथ आयुर्वेद और योग को भी प्रचारित कर रही है। सरकार ने **National Medical and Wellness Tourism Promotion Board** का प्रस्ताव भी तैयार किया है। भारत में चिकित्सा तकनीकों की क्षमता के प्रदर्शन के लिये विभिन्न सेमिनारों, सम्मेलनों और प्रदर्शनियों का आयोजन किया जा रहा है। वर्ष 2003 में **Federation of Indian Chambers of Commerce and Industry (FICCI)** की ओर से चिकित्सा उद्योग के नीति–निर्माताओं और अस्पतालों के साथ एक कार्यक्रम आयोजित किया था। तकनीकी के प्रोत्साहन के अलावा इन आयोजनों का एक लक्ष्य भारत में चिकित्सा पर्यटन को बढ़ावा देना भी है।

सामान्यतः भारत में चिकित्सा पर्यटन के विकास के मजबूत बिंदुओं में कम लागत, विशेषज्ञ चिकित्सकों और अन्य स्टाफ की उपस्थिति, कार्डियोवस्कुलर, अंग प्रत्यारोपण जैसे आधुनिक उपचारों से संबंधित प्रावधान, प्रजननक्षमता संबंधी उपचार को शामिल किया जा सकता है। भारत में चिकित्सा पर्यटन के विकास की अपार संभावनाएं हैं, क्योंकि विकसित देशों में लोगों की औसत आयु में वृद्धि के कारण स्वास्थ्य सेवाओं की मांग बढ़ रही है, इसके अलावा कई देशों में स्वास्थ्य सेवाएं खासी महंगी हैं। इसके अलावा स्वास्थ्य पर्यटन की बढ़ती मांग, कुछ देशों में व्यापक राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा व्यवस्था का अभाव, अविकसित देशों में बेहद कमजोर स्वास्थ्य सुविधाएं, दुनियाभर में बड़ी आबादी की उम्र में वृद्धि और इसके चलते आवश्यक स्वास्थ्य देखभाल की बढ़ती मांग शामिल हैं।

इस क्षेत्र से जुड़े कुछ प्रासंगिक मुद्दों की बात करें तो यद्यपि सरकार ने चिकित्सा पर्यटन के प्रोत्साहन के लिये कुछ कदम उठाये हैं, लेकिन अब भी सुगठित और निरंतर समर्थन का अभाव बना हुआ है। उद्योग से जुड़े विभिन्न कारकों जैसे अस्पतालों, होटलों, एयरलाइनों, टूर ऑपरेटरों आदि में समन्वय का अभाव है। इनके अलावा समुचित मान्यता और नियमन–नियंत्रण का अभाव भी अहम मसला है। यूरोप और अमेरिका से आने वाले चिकित्सा पर्यटक नियमों के पालन की सख्ती से मांग करते हैं, वे अकसर अस्पतालों से **Joint Commission International (JCI)** की मान्यता, प्रमाणपत्र संबंधी जानकारी लेते हैं और यह सुनिश्चित करना चाहते हैं कि अस्पताल में उन्हें निर्धारित मानक के अनुरूप चिकित्सा सेवा उपलब्ध हो पायेगी या नहीं। Joint Commission International (JCI) शिक्षा, प्रकाशन, सलाह–सुझाव सेवाओं, अंतर्राष्ट्रीय

मान्यताओं और प्रमाणीकरण आदि के जरिये रोगी को अंतर्राष्ट्रीय समुदाय में सुरक्षित और गुणवत्तापरक चिकित्सा सेवा मुहैया कराने पर जोरदेता है। सौ से अधिक देशों में जेसीआई ने स्वास्थ्य सेवाओं के कठोर मानकों को लेकर अस्पतालों, क्लीनिकों, अकादमिक स्वास्थ्य केन्द्रों, स्वास्थ्य व्यवस्थाओं और एजेंसियों, सरकारी मंत्रालयों, अकादमिक विशेषज्ञों और अंतर्राष्ट्रीय अधिवक्ताओं के साथ अनुबंध किये हैं। लेकिन भारत में कई अस्पतालों के पास ऐसे प्रमाणपत्र नहीं हैं और जब पर्यटकों की स्वास्थ्य देखभाल की बात आती है तो वे मानकीकरण में शामिल नहीं हो पाते हैं। दूसरे देशों से आने वाले कई मरीज इसलिये यह रास्ता चुनते हैं क्योंकि उनकी बीमा पॉलिसी में उनकी बीमारी कवर नहीं होती है, इसके अलावा उनके देश के अस्पतालों में सर्जरी के लिये लंबा इंतजार करना पड़ता है। इसे देखते हुये सरकार को यह सुनिश्चित करने के लिये ठोस कदम उठाने की जरूरत है कि बेहतर स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध कराने के लिये अस्पताल मान्यता हासिल करें। अन्य चुनौतियों में थाईलैंड, मलेशिया, सिंगापुर आदि के साथ स्पर्धा, स्वास्थ्य अवस्थापना में कमजोर निवेश आदि हैं।

9.4 चिकित्सा पर्यटन से जुड़े मुद्दे और चिंताएं (Issues and Concerns Regarding Medical Tourism)

निजी हितधारक और भारत सरकार चिकित्सा पर्यटन को राजस्व की बेहतर क्षमता देखते हुये बेहद तेजी से बढ़ावा दे रहे हैं, लेकिन यहां इसकी अच्छाइयों और बुराइयों का सजग विश्लेषण आवश्यक है। हम पहले ही चिकित्सा पर्यटन के प्रभाव और इसकी क्षमताओं के बारे में जान चुके हैं, अब हम इससे जुड़े विभिन्न मुद्दों और चिंताओं की बात करेंगे। सबसे बड़ी चिंता चिकित्सा पर्यटन के विकास के साथ स्थानीय स्वास्थ्य सेवाओं पर पड़ने वाले असर की है। भारत में इसका असर मुख्यतः उपेक्षित समुदायों पर नजर आ सकता है जो पहले ही प्राथमिक चिकित्सा सेवा हासिल करने के लिये संघर्षरत रहते हैं। क्या इससे स्वास्थ्य सेवाओं की आवश्यक जरूरतों की ओर ध्यान दिये जाने में कमी आयेगी? यह बड़ा सवाल है। नेशनल हेल्थ बिल 2009 ने स्वास्थ्य सेवाओं और चिकित्सा पर्यटन दोनों ही क्षेत्र में निजी सार्वजनिक साझेदारी यानी Public Private Partnerships (PPP) को कानूनी अधिकार दे दिया है और अतिरिक्त छूट देना भी सुनिश्चित किया गया है। लेकिन निजी और सार्वजनिक स्वास्थ्य व्यवस्थाओं में लागत के अंतर को स्पष्ट नहीं किया गया है। जैसा कि हम जानते हैं कि राष्ट्रीय बजट में पहले ही स्वास्थ्य सेवाओं पर होने वाला खर्चा बेहद कम होता है और अगर बजट के इस हिस्से में से भी चिकित्सा पर्यटन के विकास जैसे कार्यक्रम संचालित किये जायेंगे तो इसका सीधा अर्थ यही है कि बुनियादी प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा की बदहाली खतरनाक स्तर पर पहुंच जायेगी।

भारत में अब तक किसी आधिकारिक निकाय की ओर से चिकित्सा पर्यटन संबंधी गाइडलाइन तय नहीं की गयी हैं, यह बिन्दु निजी स्वामित्व पर ही छोड़ दिया गया है। सरकार ने कुछ शर्तें प्रस्तावित जरूर की हैं। लोक लेखा समिति की वर्ष 2005 की रिपोर्ट बताती है कि दिल्ली में कुछ निजी अस्पतालों को भर्ती होने वाले मरीजों में से 25 फीसदी और ओपीडी में आने वाले 40 प्रतिशत मरीजों को निःशुल्क इलाज दिये जाने के लिये कहा गया था। लेकिन, इनमें से किसी भी अस्पताल ने इसका पालन नहीं किया। रेड्डी बताते हैं, यह नीति ऐसे कई लोगों के जीवन को बचाने का अवसर दे सकती है जो गंभीर और जानलेवा बीमारियों से ग्रसित हैं, लेकिन महंगा इलाज करवा पाने में सक्षम नहीं हैं। लेकिन अनुदान की आड़ में होने यह लगा कि गरीबों के लिये चलने वाली यह योजना समृद्ध लोगों के लिये सार्वजनिक चैरिटेबल संस्थानों के रूप में

धन कमाने का जरिया बन गयी। स्नाइडर बताते हैं कि इस क्षेत्र में हुये कई शोध स्पष्ट करते हैं कि चिकित्सा पर्यटन को स्वास्थ्य सेवाओं के विकास के समाधान के तौर पर दिखाया जाना घातक हो सकता है, क्योंकि ऐसी कई वास्तविक कहानियां सामने आयी हैं, जहां स्पष्ट हुआ है कि चिकित्सा पर्यटन स्वास्थ्य असमानता का कारण बन सकता है।

एक अन्य चिंता उपचारोपरान्त देखभाल की है। यदि कोई रोगी गंभीर बीमारी से जूझ रहा हो तो ऐसा संभव है कि संबंधित संस्थान या डॉक्टर इलाज के बाद उसकी देखभाल को लेकर अनिच्छुक हो। इसे लेकर कोई कानूनी भरोसा भी नहीं है। वेलोरी कूक्स जो एसएफयू में स्वास्थ्य सेवाओं पर शोध अध्ययन करते हैं, ने जेरेमी स्नाइडर के साथ एक कांफ्रेंस आयोजित की। स्नाइडर भी विश्वविद्यालय में स्वास्थ्य नीतिशास्त्री हैं। कूक्स ने बताया कि चिकित्सा उत्तरदायित्व एक बड़ी और गंभीी चिंता है। अमेरिका जैसे समाज, जहां मुकदमे और विवाद की प्रकृति रही है, में कोई भी चिकित्सक विदेश में इलाज कराकर लौटे मरीज की उपचारोपरान्त देखभाल नहीं करना चाहेगा (यदि उपचारोपरान्त किसी तरह की समस्या सामने आती है), यहां दिक्कत यह है कि ऐसा कोई कानूनी मानक नहीं है जो अंतर्राष्ट्रीय रोगी को सुरक्षा प्रदान कर सके। एक अन्य महत्वपूर्ण मुद्दा यह है कि चिकित्सकीय पेशेवर बेहतर वेतन की आस में निजी सेक्टर की ओर ही जा रहे हैं। विशेषकर शहरी क्षेत्रों में वे बेहतर पारिश्रमिक के लिये एक के बाद एक निजी सेक्टर की ओर बढ़ते हैं जो पारिश्रमिक असमानता की वजह बन रहा है। यह सुपर स्पेशलिस्ट मुख्यतः महानगरों में स्थित निजी और कॉरपोरेट अस्पतालों तक ही सीमित हैं। स्वास्थ्य नीतियों में अब तक इस समस्या का समाधान नहीं तलाशा जा सका है। चिकित्सा विशेषज्ञों के लिये नौकरी के अवसरों में यह बदलाव आया है कि पहले जो डॉक्टर विदेशों में काम करते थे, अब उन्हें भारत लौटने पर कॉरपोरेट अस्पतालों में बेहतरीन पारिश्रमिक मिलने लगा है और चिकित्सा पर्यटन के बढ़ावे के साथ अवसरों और डॉक्टरों की मांग में भी खासी वृद्धि आयी है। दूसरी ओर, नर्सों के लिये अब भी अवसरों का अभाव बना हुआ है, क्योंकि निजी और कॉरपोरेट सेक्टर में अब भी नर्सों का पारिश्रमिक सरकारी अस्पतालों के मुकाबले कम ही है। अनियंत्रित निजी सेक्टर राष्ट्र के प्रति अपने दायित्वों (जैसे संक्रामक रोगों से बचाव, मातृ मृत्युदर और कुपोषण से होने वाली मौतें आदि) की अनदेखी करता है। इसके अलावा उपेक्षित एवं निर्धन वर्ग के शोषण, विशेषकर महिलाओं में सरोगेसी की मांग, अंग दान आदि सामने आते हैं। इस तरह की मांगों के चलते गैरकानूनी स्वास्थ्य केन्द्र बढ़ रहे हैं, जिनमें से अधिकतर पर्यटकस्थलों पर हैं।

नीतिगत रूप से देखें तो नवउदारवाद के बाद स्वास्थ्य सेवा के क्षेत्र में निजी इंश्योरेंस सेक्टर का प्रवेश हुआ, जिसने इस क्षेत्र में भारी निवेश को आकर्षित किया। इसका दूसरा पहलू यह था कि सभी स्वास्थ्य बीमा पॉलिसियों ने इस क्षेत्र में समानता के सिद्धांत को कमजूर किया। सभी नयी, आधुनिक और महंगी तकनीकें निजी संस्थानों तक सीमित हो गयीं, जिसके चलते सार्वजनिक स्वास्थ्य संस्थान ढहने के कगार पर पहुंच गये। निर्धनों और अमीरों के इलाज के लिये इसके चलते उपजी नयी व्यवस्था ने भारत में स्वास्थ्य सेवाओं को दो अलग बिंदुओं पर पहुंचा दिया, जिसके चलते चिकित्सा पर्यटन का प्रारंभ हुआ। सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवा में अवस्थापना का अभाव, कर्मचारियों का टोटा, रोगियों का अप्रबंधनीय बोझ, गुणवत्ता का अभाव जैसी चुनौतियां आज भी बरकरार हैं, जो 13 वर्ष पूर्व नेशनल रूरल हेल्थ मिशन को प्रारंभ किये जाने के वक्त थीं। यह सब निजी सेक्टर को दी गयी छूट और सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं में निवेश को कम करते जाने का नतीजा हैं। प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा को अपनी प्राथमिक जिम्मेदारी बताते हुये सरकार यह

जरूर कहती है कि निजी स्वास्थ्य सेवाओं से होने वाले लाभ को इस ओर स्थानांतरित करते हुये समग्र स्वास्थ्य सेवाओं को बेहतर बनाया जायेगा, लेकिन अब तक ऐसा कुछ भी होता नहीं नजर आया है। इसी तरह चिकित्सा पर्यटन किस तरह समग्र स्वास्थ्य सेवा में समानता और विकास में योगदान कर रहा है, यह भी शोध का विषय है।

9.5 निष्कर्ष (Conclusion)

इस तरह हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि चिकित्सा पर्यटन को पूर्ण समर्थन दिये जाने से पूर्व इसका पुनर्मूल्यांकन आवश्यक है। जैसा कि हम जानते हैं कि निजी स्वास्थ्य सेक्टर पर और अधिक नियंत्रण की जरूरत है, इससे पहले कि यह स्वास्थ्य सेवा के लिये जूझ रही अधिसंख्य आबादी के संसाधनों को ही निगल जाये। सरकार के लिये अब सबसे बड़ी चुनौती यह है कि वह किस तरह कम लागत और गुणवत्तापरक स्वास्थ्य सेवाओं के नागरिकों के अधिकार तथा निजी हितधारकों के चिकित्सा पर्यटन और अन्य कार्यों में संतुलन बनाये, ताकि अर्थव्यवस्था के लिये आय के साधन भी बने रहें और आम लोगों को बेहतर स्वास्थ्य सेवाएं मिलना भी सुनिश्चित किया जा सके।

9.6 भावी अध्ययन (Further Readings)

- Cohen, E. (2010). Medical Tourism. A critical evaluation. Tourism Recreation Research, 35 (3), 225-238.
- Graburn, N. H. (1977). Tourism: The sacred journey. In V. L. Smith, Hosts and Guests (pp. 17-31). Philadelphia: University of Pennsylvania Press.
- Reddy, Sunita, and ImranaQadeer. “Medical tourismin India: Progress or predicament.” Economic and Political Weekly 45(20), 2010, 69-75.